नन्दरानी तथा अन्य एकांकी

श्री शम्भूदयाल सक्सेना

नवयुग ग्रन्थ कुटीर
बीकानेर

प्रकाशक : नवयुग ग्रन्थ कुटीर बीकानेर
मुद्रक : एजूकेशनल प्रेस बीकानेर
मूल्य : २५ नये पैसे

सूची

रचनाकाल
अप्रैल १९५२

नंदरानी

पात्र

नंदरानी	नंद महर की स्त्री यशोदा
	स्मृति पात्र
नंद	गोकुल ग्राम के मुखिया, नंदरानी के पति
देवकी	वसुदेव की स्त्री
कृष्ण	नंदरानी के पोष्यपुत्र
राधा	कृष्ण की सखी
ऊधो	कृष्ण के सखा
	पथिक, सखा आदि

गोकुल ग्राम नंद महर का कक्ष

सायंकाल

सामने धूसर क्षितिज पर एक तारा झलमला रहा है। नंदरानी उस पर दृष्टि गड़ाये चुपचाप बैठी है। घर में बाहर भीतर सब जगह शून्यता छा रही है। गोकुल गांव सर्वव्यापी शून्यता में डूब-सा रहा है। उसकी कल्पना में सुन्दर अतीत के एक प्रभात की स्मृति होती है। पर्व-स्नान यमुना का तट। दो सखियों का प्रेम मिलन। कुशलक्षेम संभाषण।

नंदरानी

बहिन तेरे मुखड़े पर यह विषाद की छाया कैसे गहरी हो रही है ?

देवकी

मेरे विषाद की कथा न पूछने की है न कहने की, बहिन।

नंदरानी

मुझ से तेरा क्या छिपाव है ? कोई दूसरी बात हमारे बीच नहीं हो सकती।

देवकी

यह क्या मैं नहीं जानती परन्तु …

मन्वरानी

फिर परन्तु क्या, मौसी। अपने जी की बात मुझे बता दो सही।

देवकी

बड़ी लज्जा की बात है। बड़े दुख की बात है। उसे कहने से कोई लाभ नहीं है बहना।

मंवरानी

तब तू मेरी सगी नहीं।

देवकी

क्यों ?

मंवरानी

तू दुराव रखती है। अपना समझती तो अपने दुख-दर्द में अपनी बहिन से छिपाव न करती ?

देवकी

यह बात नहीं है।

मंवरानी

फिर क्या बात है ?

देवकी

— बात को सुनाकर मैं अपनी बहिन के दुख को बढ़ाऊँगी ही,

यह जानते हुए भी मैं उसे कैसे भुलाऊ ? फिर इतने बड़े कलंक की बात !

नंदरानी

अभी तो मुझे भुला बहिन । दुख और कलंक का इतना बड़ा बोझ मैं तुझे अकेले ढोने नहीं दूंगी । तेरा दुर्बल शरीर !

देवकी

मैं सुनाऊ तो तू मुझे घृणा से दुरदुरा देगी । तेरे स्नेह की निधि को खोने का बोझम कैसे उठाऊ भला ?

नंदरानी

जिसे मैंने जमुना को साक्षी करके राखी माना है सूर्य और चंद्र जिस बहिनापे के गवाह हैं वह क्या यों टूट सकता है, मौसी !

देवकी

जसोदा जोजो तेरा हठ । उसके आगे क्या मेरा व्रत ठहर सकता है ? ले सुन । (मुंह थोड़ा आगे करके इस प्रकार कहती है कि जसोदा के सिवा कोई और न सुन पाये ।) मेरा मुंह देखना पाप है नंदरानी । मैं पुत्रघातिनी हूं । मैं अपनी संतति को आप ही खा जाती हूं ।

नंदरानी

(अचरज में भरकर) यह तू क्या कहती है देवकी ?

देवकी

मैं सत्य कहती हूँ नंदरानी। मैं माँ नहीं राक्षसी हूँ। अपने इन्हीं हाथों से मैंने एक नहीं अपने सात फूल से बच्चों का बलिदान किया है। उनका गला घोंटा है। माँ के दूध की एक बूंद भी उनके गले में नहीं उतरने दी है। उनका वह तड़पना उनका वह छटपटाना, उनका वह रुदन! ओफ! उस महापाप से मेरा सुदर्शन रूप काला पड़ गया है। मेरी मालन सी देह कोयला हो गई है। आज सोचा था यम-स्नान के बहाने यमुना मैया की गोद में विश्राम लेकर इस नारकी जीवन का अन्त कर दूंगी। पाप के भार को अब और अधिक नहीं ढोऊँगी।

अञ्चल में मुँह छिपा कर सिसकती है।

नंदरानी

(देवकी को अपनी ओर खींच कर छाती से लगा लेती है) बहना मेरी कोयलिया! मैं तेरी बात समझने में असमर्थ हूँ। मुझे लगता है कि धरती मेरे पाँवों के नीचे से सरक रही है और यमुना का प्रवाह जहाँ का तहाँ थमा जा रहा है।

देवकी

छोड़ दे, मुझे मत छू नंदरानी। पुण्य गंगोदक भी राक्षसिनी मेरी पापिनी छाया से दूर होगा।

अपनी भुजाओं से अपने को मुक्त करने का यत्न करती है।

नंदरानी

दुखियारी बहिन, मुझसे तनिक साफ साफ कह ! तो क्या यह सच नहीं है कि भाई कंस का कोप तेरे संतति-सुख को राहु बनकर ग्रस रहा है ? ऐसी ही चर्चा तो रही है ।

देवकी

यह सब व्यर्थ है ! हजार कंस भी क्या माँ से उसके जीते जी, उसकी संतान को छीन सकते हैं ?

नंदरानी

छीनने की मत कह बहिन ! अत्याचारी क्या नहीं कर सकता ?

देवकी

यदि माँ सचमुच माँ हो तो कैसा ही अत्याचारी उसके सामने उसकी संतान का स्पर्श नहीं कर सकता । माँ के शरीर को बोटी बोटी अलग कर देने के बाद ही वह उसे हाथ लगा सकता है । और यहाँ सब मेरी इच्छा से मेरी स्वीकृति से मेरी आँखों के सामने हुआ । यदि मैं माँ होती तो प्राणों का मोह छोड़कर उसका विरोध करती । विश्व का कण कण माँ के विरोध का साथ देता । हजारों कंस धूल में मिल जाते, —परन्तु मैं माँ होती तब न ।

देवकी

मैं सत्य कहती हूं मंदरानी। मैं माँ नहीं राक्षसी हूं। अपने इन्हीं हाथों से मैंने एक नहीं अपने सात फूल से बच्चों का बलिदान किया है। उनका गला घोंटा है। माँ के दूध की एक बूंद भी उनके गले में नहीं उतरने दी है। उनका वह तड़पना उनका वह छटपटाना, उनका वह रुदन! ओफ! उस महापाप से मेरा सुवर्ण तन काला पड़ गया है। मेरी माखन सी देह कोयला हो गई है। आज सोचा था पर्व-स्नान के बहाने यमुना मैया की गोद में विश्राम लेकर इस नारकी जीवन का अन्त कर दूंगी। पाप के भार को अब और अधिक नहीं ढोऊंगी।

अञ्चल में मुंह छिपा कर सिसकती है।

मंदरानी

(देवकी को अपनी ओर खींच कर छाती से लगा लेती है) बहना मेरी कोयलिया! मैं तेरी बात समझने में असमर्थ हूं। मुझे लगता है कि धरती मेरे पांवों के नीचे से सरक रही है और यमुना का प्रवाह जहां का वहां जमा जा रहा है।

देवकी

छोड़ दे, मुझे मत छू नंदरानी। पुण्य सरोवर की राजहंसिनी मेरी कलंकिनी छाया से दूर होजा।

उसकी भुजाओं से अपने को मुक्त करने का यत्न करती है।

नंदरानी

दुखियारी बहिन, मुझसे तनिक साफ साफ कहु। तो क्या यह सच नहीं है कि भाई कंस का कोप तेरे संतति-सुख को राहु बनकर ग्रस रहा है? ऐसी ही चर्चा तो रही है।

देवकी

यह सब व्यर्थ है। हमारा कंस भी क्या माँ से उसके जीते जी उसकी संतान को छीन सकते हैं?

नंदरानी

छीनने की मत कहु बहिन। अत्याचारी क्या नहीं कर सकता?

देवकी

यदि माँ सचमुच माँ हो तो कैसा ही अत्याचारी उसके सामने उसकी संतान का स्पर्श नहीं कर सकता। माँ के शरीर को बोटी बोटी अलग कर देने के बाद ही वह उसे हाथ लगा सकता है। और यहाँ सब मेरी इच्छा से मेरी स्वीकृति से मेरी आँखों के सामने हुआ। यदि मैं माँ होती तो प्राणों का मोह छोड़कर उसका विरोध करती। विश्व का कण कण माँ के विरोध का साथ देता। हजारों कंस धूल में मिल जाते, ...परन्तु मैं माँ होती तब न।

नंदरानी

मेरी मैया मेरी सहेली। तेरे दुख को मैं निपूती क्या समझूंगी।

देवकी

प्राणों के मोह से मैंने अपने हृदय के टुकड़ों को एक एक करके दे दिया। मेरे भीतर एक भयानक आग धधक रही है। प्रतिहिंसा की आग नहीं। अपने प्रति घृणा की आग। मैंने दुनियां में माता के आदर्श को लजाया है। मेरा दुष्कर्म विषधर बनकर आज मुझे डस रहा है। जिस जीवन का मैंने मोह किया वह आज पत्थर की शिला बनकर मुझे पीस रहा है।

नंदरानी

(अपने अंचल से देवकी के आंसू पोंछती हुई) शान्त हो बहिन शान्त हो। तू ने जो कुछ किया है बेबस होकर किया है। तू उसके लिए दोषी नहीं है।

देवकी

नंदरानी, अब इस जीवन में शांति कहां बहिन। मूर्तिमान पाप मेरी आंखों के सामने खड़ा है। उसके खांड़े के नीचे मेरी गर्दन रहती है। यमुना मैया ही शरण दे तो मैं उसके कोप से बच सकती है।

मवरानी

तेरी कोख से विश्व तेज झांक रहा है। अत्याचारी के पाप के प्याले को तेरे द्वारा भरवाकर ईश्वर तुझे अमर यश देना चाहता है देवकी ! तू मर नहीं सकती जमुना मया तुझे ग्रहण नहीं कर सकती।

देवकी

मंवरानी क्या कहती हो ! वा महापातक विन्दु का दर्द मन मुझे पीड़ित कर रहा है उसी का चक्र एक बार और चलने दूं ? नहीं जीजी, मेरी आँखें अब वह दृश्य नहीं देख सकतीं, मेरा हृदय अब उस पापाचार को नहीं सह सकता। उससे पहले मैं मर जाऊँगी।

मवरानी

देवकी विश्व नियन्ता की लीला का आशय किसने समझा है ? इतने दुख में भी तेरे ऊपर वज्रपात नहीं करता तो इसमें उसका कोई आशय होना चाहिए।

देवकी

चाहे जो हो बहिन, नौ महीने मोह-ममता को अपने भीतर पोस कर, मैं उसी परिणाम के लिए नहीं रख सकती।

मवरानी

तो तू प्राण तजेगी, बहिन !

देवकी

हां प्राण देकर मै माता के कर्तव्य का पालन करूंगी, नंदरानी। जिससे अब तक बचती रही हूँ वह कर्तव्य आज पूरा करूंगी।

नंदरानी

लेकिन देवकी मेरी प्यारी सखी मैं तुझे मरने न दूंगी। मेरी कोख देख। विधना ने शायद इसी हेतु इस अवस्था में अपना यह प्रसाद दिया है मुझे।

देवकी

अरे सच नंदरानी भगवान तुझे पुत्रवती करे बहिन। नंद महर की चिरदिन की अभिलाषाएं पूरी हों, पर तू मेरी चिन्ता न कर बहिन। मुझ भाग्यहीना के लिए तू अपनी आंखों से आंसू न डाल।— जा जा मेरी छाया से इस समय तेरे दूर रहने की और भी अधिक आवश्यकता है।

नंदरानी

देवकी मेरी प्रिय सहचरी जा जा जो बात मैंने कही है उसे याद रखना। वसुदेव से कह देना वे आकर उससे मिल लें। वे दोनों बालसखा आप ही कोई उपाय कर लेंगे। भगवान ने चाहा तो तेरा यह शिशु दुनिया में अजर अमर रहेगा।

देवकी

ऐसा कहीं हुआ है ? जीवन भर के पुण्य संचय का तेरा ऋण क्या मैं अपने दुर्भाग्य के लिए ले सकती हूँ ?

नंदरानी

याद कर एक दिन तूने कहा था उदास क्यों होती हो नंदरानी ! मेरी एक संतान को तुम पाल लेना । वह तेरा भावी शिशु आज से मेरा हो गया ! मेरी धरोहर समय पर मुझे सौंप देनी होगी । इस बात को भूल मत जाना देवकी !

देवकी

यदि तेरी धरोहर की मैं रक्षा कर सकी तो उस पर कभी अपना अधिकार नहीं जताऊंगी, नंदरानी ! यदि वह जिया जागा तो मेरे भाग से नहीं तेरे भाग से जियेगा ।

नंदरानी के कानों में वही पिछले शब्द गूंजते रह जाते हैं । कल्पना का सूत्र टूट जाता है । वह चौंक कर चारों ओर देखती है । संध्या की धूसर छाया रात की कालिमा में बदल गई है । आकाश तारों से जगमग हो उठा है । गोकुल ग्राम में शून्यता का विस्तार हो चला है । अनेक नये दृश्य उसकी कल्पना में आते और विलीन होते रहते हैं । उसका कन्हैया सभी में मुख्य होता है । दृश्य इतनी जल्दी जल्दी बदलते हैं तो भी वे सभी उसके परिचित हैं । उसकी

राधा

कैसी ?

नंदरानी

तेरे से क्या कहूँ बेटी मैं। और तेरा बाबा भी तो वैसा ही है।

राधा

(कृष्ण से) मैं जा रही हूँ कन्हैया। मैंने दूध की जो तुम्हारे घर आई।

कृष्ण

क्यों रूठ गई ? माँ तो हँसी कर रही है। (नंदरानी से) मैया से कह जा रही है रूठी। मैंने कहा था न कि उसे चिढ़ा मत।

नंदरानी

अरी ओ री कीरतिकुमारी! (उसका हाथ पकड़ कर) बड़ी मानिनी है। आ अब मैं कुछ न कहूँगी रानी बेटी! तेरी अम्मा मेरी सहेली होती है।

राधा को गोद में बिठा लेती है। उसकी चोटी खुल है। उसकी सारी ओढ़नी रख लेती है रेशमी डोर खोलने को देती है। नई पायलिया पहनाती है।

कृष्ण

बस बहुत होगया। अब बस आंखमिचौनी खेलेंगे।

दोनों आँगन के दूसरे कोने में जाकर खेलते हैं। गाँव के और लड़के लड़कियां भी आजाते हैं।

नंदरानी

इस राधाकृष्ण की जोड़ी को भगवान ने मानों अपने हाथों से रचा है। (जाकर बाहर से नंद महर को बुला लाती है। आंख के इशारे से उन्हें दिखाती है।) देखो।

नंद

सचमुच नंदरानी। जोड़ी तो बड़ी सुन्दर है। कन्हैया के पास राधा कसौटी पर सोने की रेखा सी लगती है।

नंदरानी

बस चलो। नजर न मारो। विधना को धन्यवाद दो जिसने कन्हैया के लिए राधा को गढ़कर भेजा है

नंद

कल ही किसी को बरसाने भेजना पड़ेगा।

नंदरानी

इसमें सोच विचार क्या? आज ही भेज दो न।

नंद

आज ही। अच्छी बात है आज ही भेज दूंगा।

नंद का प्रस्थान। कृष्ण हथेली से राधा की आँखें मींचते हैं। आँखों के कोनों से वह फिर भी देखती रहती है।

एक सखा

कन्हैया यह देख रही है।

दूसरा सखा

आँखें ठीक से मींच कान्हा।

कृष्ण

इसकी आँखें हैं कि आम की फाँकें? मेरे हाथों में तो आती ही नहीं।

इस बात से नटरानी चौंक पड़ती है। ध्यान टूट जाता है। फिर वही अंधेरी रात। सुनसान गोकुल ग्राम के अपने कक्ष में आकाश की ओर निहारती वह अकेली बैठी है। बाहर हवा वेग से सनसना रही है। वह एक गहरी निश्वास लेती है। आँखों के सामने नये दृश्य आते जाते हैं।... राधा अब सयानी हो गई है। कन्हैया भी बड़ा हो गया है। दोनों का प्रेम दिन दिन गाढ़ा होता जाता है। ब्रज के युवक और

रचनाकाल
मार्च १९४९

नंदरानी

पात्र

नंदरानी	नंद महर की स्त्री यशोदा
	स्मृति पात्र
नंद	गोकुल ग्राम के मुखिया नंदरानी के पति
देवकी	वसुदेव की स्त्री
कृष्ण	नंदरानी के पोष्यपुत्र
राधा	कृष्ण की सखी
ऊधो	कृष्ण के सखा
	पथिक, सखा आदि

गोकुल ग्राम : नंद महर का कक्ष

सायंकाल

सामने सुदूर क्षितिज पर एक तारा झलमला रहा है। नंदरानी उस पर दृष्टि गड़ाये चुपचाप बैठी है। घर में बाहर भीतर सब जगह शून्यता छा रही है। गोकुल गाँव सर्वव्यापी शून्यता में डूब-सा रहा है। उसकी कल्पना में सुन्दर अतीत के एक प्रभात की सृष्टि होती है। पर्व-स्नान यमुना का तट। दो सखियों का प्रेम मिलन। कुशलक्षेम समाचार।

नंदरानी

बहिन तेरे मुखड़े पर यह विषाद की छाया कैसे गहरी हो रही है?

देवकी

मेरे विषाद की कथा न पूछने की है न कहने की बहिन।

नंदरानी

मुझ से तेरा क्या छिपाव है? कोई दूसरी बात हमारे बीच नहीं हो सकती।

देवकी

यह क्या मैं नहीं जानती, परन्तु...

भँवरानी

फिर परन्तु क्या, भोली। अपने जी की बात मुझे बता तो सही।

देवकी

बड़ी लज्जा की बात है। बड़े दुख की बात है। उसे कहने से कोई लाभ नहीं है बहिना।

भँवरानी

तब तू मेरी सखी नहीं।

देवकी

क्यों ?

भँवरानी

तू दुराव रखती है। अपना समझती तो अपने दुख-दर्द में अपनी बहिन से छिपाव न करती ?

देवकी

यह बात नहीं है।

भँवरानी

फिर क्या बात है ?

देवकी

उस बात को सुनाकर मैं अपनी बहिन के दुख को बढ़ाऊँगी ही

यह जानते हुए भी मैं उसे कैसे सुनाऊं ? फिर इतने बड़े कलंक की बात !

नवरानी

तभी तो मुझे सुना बहिन। दुख और कलंक का इतना बड़ा बोझ मैं तुझे अकेले ढोने नहीं दूंगी। तेरा दुबल शरीर !

देवकी

मैं सुनाऊं तो तू मुझे घृणा से दुरदुरा देगी। मेरे स्नेह की निधि को खोने का जोखम कैसे उठाऊं भला ?

नवरानी

जिसे मैंने यमुना को साखी करके सखी माना है सूर्य और चंद्र जिस बहिनापे के गवाह हैं वह क्या यों टूट सकता है भोली !

देवकी

जसोदा जीजी तेरा हठ। उसके आगे क्या मेरा व्रत ठहर सकता है ? ले सुन ! (मुंह थोड़ा आगे करके इस प्रकार कहती है कि जसोदा के सिवा कोई और न सुन पाये।) मेरा मुंह देखना पाप है नवरानी। मैं पुत्रघातिनी हूं। मैं अपनी संतति को आप ही खा जाती हूं।

नवरानी

(अचरज में भरकर) यह तू क्या कहती है देवकी ?

देवकी

मैं सत्य कहती हूँ मंदरानी। मैं माँ नहीं राक्षसी हूँ। अपने इन्हीं हाथों से मैंने एक नहीं अपने सात फूल से बच्चों का बलिदान किया है। उनका गला घोंटा है। माँ के दूध की एक बूँद भी उनके गले में नहीं उतरने दी है। उनका वह तड़पना उनका वह छटपटाना, उनका वह रुदन! ओफ! उस महापाप से मेरा सुवर्ण रूप काला पड़ गया है। मेरी मासम सी देह कोयला हो गई है। आज सोचा था, पर्व-स्नान के बहाने यमुना मैया की गोद में विश्राम लेकर इस पातकी जीवन का अन्त कर दूँगी। पाप के भार को अब और अधिक नहीं ढोऊँगी।

अंचल में मुँह छिपा कर सिसकती है।

मंदरानी

(देवकी को अपनी ओर खींच कर छाती से लगा लेती है) बहना मेरी कोयलिया! मैं तेरी बात समझने में असमर्थ हूँ। मुझे लगता है कि धरती मेरे पाँवों के नीचे से सरक रही है और यमुना का प्रवाह जहाँ का तहाँ थमा जा रहा है।

देवकी

छोड़ दे, मुझे मत छू मंदरानी! पुण्य सरोवर की राजहंसिनी मेरी कलंकिनी छाया से दूर होजा।

उसकी भुजाओं से अपने को मुक्त करने का यत्न करती है।

नंदरानी

दुखियारी बहिन मुझसे तनिक साफ साफ कह। तो क्या यह सच नहीं है कि भाई कंस का कोप तेरे संतति-सुख को राहु बनकर ग्रस रहा है ? ऐसी ही चर्चा हो रही है।

देवकी

यह सब व्यर्थ है। हजार कंस भी क्या मां से उसके जीते जी, उसकी संतान को छीन सकते हैं ?

नंदरानी

छीनने की मत कह बहिन ! अत्याचारी क्या नहीं कर सकता ?

देवकी

यदि मां सचमुच मां हो तो कैसा ही अत्याचारी उसके सामने उसकी संतान का स्पर्श नहीं कर सकता। मां के शरीर की बोटी बोटी भस्म कर देने के बाद ही वह उसे हाथ लगा सकता है। और यहां सब मेरी इच्छा से मेरी स्वीकृति से मेरी आंखों के सामने हुआ। यदि मैं मां होती तो प्राणों का मोह छोड़कर उसका विरोध करती। विश्व का कण कण मां के विरोध का साथ देता। हजारों कंस धूल में मिल जाते ---परन्तु मैं मां होती तब न।

मंदरानी

मेरी मैया, मेरी सहेली ! तेरे दुख को मैं निपूती क्या समझूंगी।

देवकी

प्राणों के मोह से मैंने अपने हृदय के टुकड़ों को एक एक करके दे दिया। मेरे भीतर एक भयानक आग धधक रही है। प्रतिहिंसा की आग नहीं। अपने प्रति घृणा की आग। मैंने दुनियां में माता के आदर्श को लजाया है। मेरा कुकर्म विषधर बनकर आज मुझे डस रहा है। जिस जीवन का मैंने मोह किया वह आज पत्थर की शिला बनकर मुझे पीस रहा है।

मंदरानी

(अपने अंचल से देवकी के आंसू पोंछती हुई) शान्त हो बहिन शान्त हो। तू ने जो कुछ किया है बेबस होकर किया है। तू उसके लिए दोषी नहीं है।

देवकी

मंदरानी, अब इस जीवन में शांति कहां बहिन ! मूर्तिमान पाप मेरी आंखों के सामने खड़ा है। उसके खांडे के नीचे मेरी गर्दन रखती है। जमुना मैया ही शरण दे तो मैं उसके कोप से बच सकती हूं।

नंदरानी

तेरी कोख से विश्व तेज झाँक रहा है। अत्याचारी के पाप के प्याले को तेरे द्वारा भरवाकर ईश्वर तुझे अमर यश देना चाहता है देवकी! तू मर नहीं सकती यमुना मैया तुझे ग्रहण नहीं कर सकती।

देवकी

नंदरानी क्या कहती हो! जो महापातक शिशु का वध बन मुझे पीड़ित कर रहा है उसी का चक्र एक बार और चलने दूँ? नहीं जीजी, मेरी आँखें अब वह दृश्य नहीं देख सकतीं मेरा हृदय अब उस पापाचार को नहीं सह सकता। उससे पहले मैं मर जाऊँगी।

नंदरानी

देवकी, विश्व नियन्ता की लीला का आशय किसने समझा है? इतने दुख में भी तेरे ऊपर वज्रपात नहीं करता तो इसमें उसका कोई आशय होना चाहिए।

देवकी

चाहे जो हो बहिन, नौ महीने मोह ममता को अपने भीतर पोस कर, मैं उसी परिणाम के लिए नहीं रख सकती।

नंदरानी

तो तू प्राण देगी, बहिन!

देवकी

हां प्राण देकर मैं माता के कर्त्तव्य का पालन करूंगी, नंदरानी ! जिससे अब तक बचती रही हूं वह कर्त्तव्य आज पूरा करूंगी।

नंदरानी

लेकिन देवकी मेरी प्यारी सखी मैं तुझे मरने न दूंगी। मेरी कोख देख। विधना ने शायद इसी हेतु इस अवस्था में अपना यह प्रसाद दिया है मुझे।

देवकी

अरे सच नंदरानी भगवान तुझे पुत्रवती करे बहिन। नंद महर की चिरदिन की अभिलाषाएं पूरी हों, पर तू मेरी चिन्ता न कर बहिन। मुझ भाग्यहीना के लिए तू अपनी आंखों से आंसू न डाल।— जा जा मेरी छाया से इस समय तेरे दूर रहने की और भी अधिक आवश्यकता है।

नंदरानी

देवकी मेरी प्रिय सहचरी जा जा जो बात मैंने कही है उसे याद रखना। वसुदेव से कह देना वे आकर उनसे मिल लें। वे दोनों बालसखा आप ही कोई उपाय कर लेंगे। भगवान ने चाहा तो तेरा यह शिशु दुनियां में अजर अमर रहेगा।

देवकी

ऐसा कहीं हुआ है ? जीवन भर के पुण्य संचय का तेरा फल क्या मैं अपने दुर्भाग्य के लिए ले सकती हूँ ?

नंदरानी

याद कर एक दिन तूने कहा था, हताश क्यों होती हो नंदरानी । मेरी एक संतान को तुम पास रखना । बस तेरा भावी शिशु प्राण से मेरा हो गया । मेरी धरोहर समय पर मुझे सौंप देनी होगी । इस बात को भूल मत जाना देवकी ।

देवकी

यदि तेरी धरोहर की मैं रक्षा कर सकी तो उस पर कभी अपना अधिकार नहीं जताऊंगी नंदरानी । यदि वह जिया जागा तो मेरे भाग से नहीं तेरे भाग से जियेगा ।

नंदरानी के कानों में यही पिछले शब्द गूंजते रह जाते हैं । कल्पना का सूत्र टूट जाता है । वह चौंक कर चारों ओर देखती है । संध्या की धूसर छाया रात की कालिमा में बदल गई है । आकाश तारों से जगमग हो उठा है । गोकुल ग्राम में शून्यता का विस्तार हो जाता है । अनेक नये दृश्य उसकी कल्पना में आते और विलीन होते रहते हैं । उसका कन्हैया सभी में मुख्य होता है । दृश्य इतनी जल्दी जल्दी बदलते हैं तो भी वे सभी उसके परिचित हैं । उसकी

स्मृति अभी तक उसके मन में ताजी है। नंदरानी कभी हंसती कभी गाती कभी आंखें बिछाती कभी मुस्कराती कभी लीन हो देखती रहती कभी मंद महर को पुकार लाती कभी क्रोध करती और कभी आंसू बहाती है। अचानक उसका कन्हैया अपूर्व लावण्यवती लड़की (राधा) को साथ ले आता है।

नंदरानी

कन्हैया तेरे साथ यह कौन है री ?

कृष्ण

मां तू नहीं जानती है इसे ?

नंदरानी

मैं कैसे जानूं री ? मैं तो आज ही देख रही हूं इसे। आ मेरे पास तो आ री। देखूं तू कहां की है ?

राधा नंदरानी के पास जाती है। मुस्कर प्रणाम करती है।

कृष्ण

यह बरसाने की है।

नंदरानी

(राधा के सिर पर हाथ रखकर) अरे, बड़ी सुलच्छणी है। कि

गांव की है री ?

राधा

बरसाने की।

नंदरानी

बरसाने की! है तो बड़ो सुहावनो तनिक मुँह ऊपर तो उठा देखूँ।

राधा लजा कर मुँह नीचा कर लेती है।

कृष्ण

माँ तू तो लगी उसे चिढ़ाने। ऐसा करने से वह फिर कैसे आयेगी?

नंदरानी

(राधा से) किसकी बेटी है री?

राधा

वृषभान की।

नंदरानी

वृषभान की, जिसको घरवारी कीरति कहलाती है ?

स्वीकारात्मक सिर हिलाती है।

नंदरानी

तू ऐसी भोली कैसे है बेटी ! तेरी मया तो बड़ी पैंठी है।

(हँसती है)

राधा

कैसी ?

भँवरानी

तेरे से क्या कहूँ बेटी मैं। और तेरा बाबा भी तो वैसा ही है।

राधा

(कृष्ण से) मैं जा रही हूँ कन्हैया। मैंने भूल की जो तुम्हारे घर आई।

कृष्ण

क्यों रूठ गई ? माँ तो हँसी कर रही है। (भँवरानी से) मैया री वह जा रही है रूठी। मैंने कहा था न कि उसे चिढ़ा मत।

भँवरानी

अरी ओ री कीर्तिकुमारी ! (उसका हाथ पकड़ कर) बड़ी मानिनी है। जा अब मैं कुछ न कहूँगी रानी बेटी ! तेरी अम्मा तो मेरी सहेली होती है।

राधा को गोद में बिठा लेती है। उसकी चोटी चूमती है। उसकी काली ओढ़नी रख लेती है, रेशमी ओढ़नी ओढ़नी को देती है। नई चुनरिया पहनाती है।

कृष्ण

बस बहुत होगया। अब पास आँखमिचौनी खेलेंगे।

दोनों आँगन के दूसरे कोने में जाकर खेलते हैं। गाँव के और लड़के लड़कियाँ भी आजाते हैं।

नंदरानी

इस राधाकृष्ण की जोड़ी को भगवान ने मानों अपने हाथों से रचा है। (जाकर बाहर से नंद महर को बुला लाती है। आँख के इशारे से उन्हें दिखाती है।) देखो।

नंद

सचमुच नंदरानी। जोड़ी तो बड़ी सुंदर है। कन्हैया के पास राधा कसौटी पर सोने की रेखा सी लगती है।

नंदरानी

बस चलो। नज़र न मारो। विधना को धन्यवाद दो जिसने कन्हैया के लिए राधा को गढ़कर भेजा है

नंद

कल ही किसी को बरसाने भेजना पड़ेगा।

नंदरानी

इसमें सोच विचार क्या ? आज ही भेज दो न।

नंद

आज ही। अच्छी बात है आज ही भेज दूंगा।

नंद का प्रस्थान। कृष्ण हथेली से राधा की आँखें मींचते हैं। आँखों के कोनों से वह फिर भी देखती रहती है।

एक सखा

कन्हैया, यह देख रही है।

दूसरा सखा

आँखें ठीक से मींच कान्हा।

कृष्ण

इसकी आँखें हैं कि आम की फाँकें? मेरे हाथों में तो आती ही नहीं।

इस बात से नंदरानी चौंक पड़ती है। ध्यान टूट जाता है। फिर वही अँधेरी रात। सुनसान गोकुल ग्राम के अपने कक्ष में आकाश की ओर निहारती वह अकेली बैठी है। बाहर हवा वेग से सनसना रही है। वह एक गहरी निश्वास लेती है। आँखों के सामने नये दृश्य आते जाते हैं।— राधा अब सयानी हो गई है। कन्हैया भी बड़ा हो गया है। दोनों का प्रेम दिन दिन गाढ़ा होता जाता है। ब्रज के युवक और

युवतियाँ कृष्ण पर प्राण देती हैं। तभी एक दिन रथ लेकर अक्रूर आ धमकते हैं। कृष्ण उनके साथ मथुरा के लिए चल पड़ते हैं। गोकुल में अंधेरा छा जाता है। राधा धूल में लोटती है। गोपियाँ और ग्वाल-बाल कृष्ण कृष्ण की रट लगाते घूमते हैं। गायें घास नहीं चरतीं बछड़े थन नहीं पकड़ते। तमाल और कदंब की छाया के नीचे होनेवाला रास रंग सहसा बंद हो जाता है। करील के कुंजों में से समय असमय बाँसुरी का स्वर नहीं सुनाई पड़ता। यमुना के किनारे शून्य उदासी छा गई है। ब्रजभूमि की सारी शोभा समाप्त सी हो गई हो। प्रातःकाल उठ कर कोई दूध नहीं बिलोता। निकाला हुआ माखन जहाँ का तहाँ पड़ा है। जब माखनचोर ही नहीं है तो उसकी संभाल कोई क्यों करे? यशोदा माता गोपियों के उलाहने को तरसती है। जहाँ तहाँ उन्होंने कहला भेजा कि तुम सब को हो क्या गया है? कन्हैया की शरारत को बरदाश्त क्यों करती हो? मेरे पास उसकी शिकायत क्यों नहीं लातीं? अब मैं उसकी हिमायत नहीं करूँगी। छाछ के माटे को फोड़कर दधिमंथी करेगा तो मैं उसे सजा दूँगी। किसी का घड़ा फोड़ता तो उसके कान मरोड़ूँगी। माखन की चोरी करेगा तो उसके बेंत लगाऊँगी। फिर भी कोई आता नहीं। साँझ को

सियार बोलते और रात को कुत्ते भूँकते हैं। इनके सिवा और कुछ सुन पड़ता है तो केवल क्रंदन और सिसकियाँ। राह चलता एक आदमी मथुर के द्वार के पास से निकलता है। भंवरानी दौड़ कर द्वार पर आ जाती है।

भंवरानी

कहाँ से आ रहे हो भाई ?

पथिक

राजधानी से आ रहा हूँ।

भंवरानी

कौन सी राजधानी ?

पथिक

राजधानी आप नहीं जानतीं ? अरे मथुरा नगरी नहीं जानतीं ?

भंवरानी

मथुरा क्यों नहीं जानूँगी। वहीं तो मेरा कन्हैया गया है।— पथिक, तुमने वहाँ मेरे कन्हैया को देखा है ? सिर पर मोरमुकुट कमर में पीताम्बर अधरों पर मुरलिया।

पथिक

कितने ही कन्हैया बसते हैं वहाँ। वह कोई छोटी नगरी थोड़े ही

है। दस योजन तक फैली है मथुरा। जहाँ तक नजर जाती है वहाँ तक अट्टालिकाएँ ही अट्टालिकाएँ।

नवरानी

कन्हैया तो मेरा एक ही है पथिक। कितने ही कन्हैया न मथुरा में हो सकते हैं न सारी धरती पर। तुमने अगर एक बार उसे देखा होता!

पथिक

मैंने मथुरा का बहुत कुछ देखा है। कंस की मथुरा में गया था और कृष्ण की मथुरा छोड़ कर आया हूँ।

नवरानी

अरे वही कृष्ण! पथिक, वही तो हमारा कन्हैया है! तुम नहीं जानते वही तो हमारा लाड़ला है।

पथिक

(लज्जित होकर) राजराजेश्वर कृष्ण आपके कन्हैया हैं!

नंदरानी

अरे हाँ बटोही! क्या तुमने उसे देखा है?

पथिक

हाँ मैंने देवकीनंदन राजराजेश्वर कृष्ण के दर्शन किये हैं।

नंदरानी

(जैसे किसी ने पत्थर से मारा हो इस तरह पीछे हट कर) क्या कहा पथिक! देवकीनंदन राजराजेश्वर कृष्ण अर्थात् कृष्ण देवकी का बेटा ?

पथिक

हां माता देवकीनंदन भगवान् वासुदेव।

नंदरानी

और नंदनंदन नहीं यशोदानंदन नहीं! हाय यह मैं क्या सुन रही हूं? हाय हाय मेरा कन्हैया। मेरी आंखों का तारा। मेरा लाड़ला कमलेश्वर मेरा राधारंजन! तू देवकीनंदन कैसे बन गया? वासुदेव कैसे हो गया? अभी दो दिन भी तो नहीं बीते हैं। मथुरा में पर धरते ही इतना बदल गया। हाय, क्या इसीलिए मैंने रात को रात नहीं माना दिन को दिन नहीं समझा! आठों पहर तेरे सुख स्वास्थ्य के लिए मनौतियां मानीं। देवताओं को पूजा। देवी को मनाया। फूल की छड़ी से कभी छुआ नहीं। माखनमिश्री के सिवा कुछ खाने को दिया नहीं। पथिक, कुछ बोलो तो सही, तुमने अभी क्या कहा था?

पथिक

कुछ व्यथित सा दिखाई पड़ता है। आंखों में आंसू आ जाते हैं।

नंदरानी

तुमसे भूल हो गई थी पथिक यह कहो न। अरे तुम तो रोने लगे!—तुम्हारी भूल कोई बड़ी भूल नहीं थी। मैं कब उसे मानती हूं। मैं नंदनंदन की मां तुम्हें क्षमा करती हूं। उठो जाओ अपना रास्ता लो भया।

> पथिक बिना कुछ कहे उठकर चल देता है। एक रथ आता हुआ दिखाई पड़ता है। घोड़ों की टापों से उड़ी हुई धूल आती है। गोकुल में हलचल मच जाती [illegible] आ रहे हैं, नंदनंदन आ रहे हैं वसुदेवनंदन आ रहे हैं राधारमण आ रहे हैं।

नंदरानी

(घर से बाहर आकर) कहां मेरा कन्हैया ?

राधा

मां यह धूल उनसे पहले ही उनका संदेशा ले आ रही है।

> उड़ती हुई धूल का आलिंगन करती है।

नंदरानी

आ, कन्हैया को छूकर आनेवाली धूल मेरी इन पथराई आंखों से लगकर इन्हें शीतल करदे।

> रथ पास आता है। कोलाहल कम हो जाता है। स्त्री पुरुष और बालक निराश होकर लौटते हैं

तो कोई और है। कृष्ण का भेजा हुआ रथ आकर खड़ा हो जाता है। ऊधो रथ में से उतर पड़ते हैं और कृष्ण-सखा के रूप में अपना परिचय देते हैं। कृष्ण के दूत को सब लोग घेर लेते हैं। नंदरानी का हृदय बैठ जाता है। वह मुँह को अंचल में छिपा लेती और रोती है।

ऊधो

(भीड़ को हटा कर) नंदरानी मैं कृष्णसखा ऊधो आपको प्रणाम करता हूँ।

नंदरानी

(भरे हुए गले से) सौ वर्ष जियो पुत्र पर यह बताओ तुम किस कृष्ण के सखा हो ?

ऊधो

मेरी परीक्षा ले रही हो मैया ? मैं उस कृष्ण का सखा हूँ जो नित्य बांसुरी में यही गाया करता है—

ऊधो मोहि ब्रज बिसरत नाहीं।
हंससुता की सुन्दर कगरी अरु कुंजन की छांहीं।
वे सुरभी वे बच्छ दोहनी खरिक दुहावन जाहीं।
ग्वाल बाल सब करत कोलाहल नाचत गहि गहि बाहीं।
यह मथुरा कंचन की नगरी मनि मुक्ताहल जाहीं।
जबहिं सुरति आवत वा सुख की जिय उमगत तनु नाहीं।
अनगिन भांति करी बहु लीला जसुदानंद निबाहीं।
ऊधो, मोहि ब्रज बिसरत नाहीं।

नंदरानी

(गद्‌गद होकर अश्रुपात करती हुई) ऊधो तुम मेरे कन्हैया के सच्चे सखा हो । तुम्हारे सामने ही उसने अपना हृदय खोला है भैया । यही मेरे लाल की वाणी है । एक बार फिर सुनाओ तो सही ।

ऊधो

माँ अब आपको मेरा विश्वास तो हुआ ?

नंदरानी

अविश्वास नहीं था पुत्र । एक पथिक से मैंने एक दूसरे ही कृष्ण की बात सुनी थी ।

ऊधो

दूसरे कृष्ण !

नंदरानी

हां भैया—देवकीनंदन भगवान् वासुदेव ।

ऊधो

मैं समझ गया माँ । पथिक बेचारा क्या जाने कि देवकीनंदन से पहले वे यशुदानंदन हैं वासुदेव से पूर्व नंदनंदन हैं । आप सब से जो कुछ उन्होंने पाया है वह क्या वसुदेव और देवकी दे सकते हैं ? आप मेरी बात पर विश्वास करें उनका मन यहां और शरीर वहां

है। कंस के अचानक पतन से कर्त्तव्य का इतना बड़ा भार उनके ऊपर आ पड़ा है कि व यहाँ आने में विवश हैं नहीं तो

मंदरानी

नहीं तो दौड़ा आता। मै जानती हूँ मेरा लाल मैया के बिना नहीं रह सकता है। मैया के बिना कौन उसके मन की बात जानने की चेष्टा करेगा ? सहज संकोच किसके सामने उसे मुँह खोलने देगा ?

ऊधो

यही बात है मां। ऐसा कोई दिन नहीं जाता जब वे ब्रज को याद करके रोते न हों।

मंदरानी

(पास खड़ी हुई राधा की ओर संकेत करके) देखो ऊधो कन्हैया की बालसहचरी वृषभान सखी को। अपने कृष्ण के लिए कलपते कलपते इसकी सोने सी देह कोयला हो गई है।

ऊधो

मै देख रहा हूँ मां। (राधा से) कीरतिकुमारी धन्य हो तुम। तुमने दुनियां में प्रेम का आदर्श स्थापित किया है। कृष्ण को तुम्हारे प्रेम का जितना बल है उतना और किसी का नहीं। इसी तुम्हारे प्रेम के बल पर उन्होंने कर्त्तव्य का इतना बड़ा पहाड़ उठाया हुआ है

राधा

कुछ बोलती नहीं है। उसकी आँखों से निरन्तर अश्रु प्रवाह उमड़ता रहता है।

ऊधो

तुम्हारे और माता यशोदा के लिए उन्होंने विशेष सन्देश दिया है। उन्हीं के शब्द में कहता हूँ सुनो—प्रेम महान है परन्तु कर्त्तव्य उससे भी महान है। कर्त्तव्य पर निछावर होने की शिक्षा मैंने तुम दोनों से ही पाई है। मैं तुम्हारा चिरऋणी हूँ। जन्मजन्मान्तर में भी मैं इस ऋण से मुक्त होने की शक्ति नहीं रखता।

राधा

लेकिन ऊधो, वे यहां आयेंगे कब यह भी कुछ कहा है? दर्शन की प्यासी इन आँखों को कब तृप्ति मिलगी?

ऊधो

राधे, उन्होंने कहा है मैं तुम्हारा ही हूँ। तुमसे दूर कभी नहीं हूँ। मैं कर्त्तव्य करता हूँ उसमें सदा तुम मेरे साथ रहती हो। तुम भी कर्त्तव्य की ओर ध्यान लगाओ। तुम देखोगी मैं सदा तुम्हारे साथ हूँ।—और यह मत समझो मैं आऊँगा नहीं। अवश्य आऊँगा। तुमसे मिले बिना मुझे चैन नहीं है।

राधा

अच्छा बात है। प्रयत्न करूंगा ऊधो, पर इतनी साधना और

इतने ज्ञान की पूँजी कहाँ से पाऊँगी यही एक सोच है।

धीरे धीरे जाती है।

ऊधो

कृष्ण-सखा! तुम सर्व समर्थ हो।

नंदरानी

ऊधो, मेरे बेटा ने मुझे कर्तव्य करने की सलाह दी है। मेरी मोह से ढकी आँखों में उसने ज्ञान की ज्योति जगाई है। जिसके ऊपर दुनिया के सुख दुख का भार है उसे मैं अपनी ही गोद में छिपा रखना चाहती थी। यह मेरा अन्याय था वत्स! मेरे कन्हैया के दोनों ही रूप सत्य हैं। प्रेम के क्षेत्र में वह नंदनंदन है यशुदानंदन है राधिकारमण है, कर्तव्य के क्षेत्र में भगवान् वासुदेव। मेरी ओर से देवकी से कहना कि वह अपने वचन का पालन करे प्रेम का प्रतीक मेरा जो कन्हैया है उस पर अपना अधिकार न जताये। राजराजेश्वर कृष्ण को मैंने उसके लिये छोड़ दिया है।

ऊधो

धन्य हो माता।

ऊधो नंदरानी के चरणों पर गिरते हैं। समस्त ग्वाल बाल और व्रजबालाएँ एक स्वर से नंदरानी का जयजयकार करते हैं।

नटरानी का ध्यान भंग हो जाता है। गंभीर रात्रि की शून्यता उसे चारों ओर से घेरे है। केवल आकाश के तारे उसकी ओर अब भी टकटकी लगाये हैं। सारा जीवन ही उसे स्वप्न की छाया सा लगता है। वेग से चलने वाला हवा का झोंका ही केवल सत्य प्रतीत होता है।

पर्दा

चन्द्रग्रहण

पात्र

गोपा	गौतम बुद्ध की पत्नी
राहुल	बुद्धदेव का पुत्र
गौतमी	बुद्धदेव की विमाता
शुद्धोदन	बुद्धदेव के पिता
सुभद्रा	गोपा की दासी

दोनों बाहें फैलाकर राहुल को गोद में भरना चाहती है।

राहुल

(गोपा की भुजाओं से अपने को मुक्त करके) माँ तुम तो सदा ध्यान में डूबी रहती हो। मैंने सबेरे कहा था न कि हम चंद्रग्रहण नहाने रोहिणी तट पर चलेंगे।

गोपा

(चौंकी हुई सी) चन्द्रग्रहण नहाने ?

राहुल

हाँ और मैं देखता हूँ तुमने अभी तक वस्त्र नहीं बदले हैं।

गोपा

मेरा चन्द्रग्रहण कहाँ छूटा है बेटा! हाय क्या वह कभी इस जीवन में छूटेगा? अगर कभी वह समय आया तो मैं तब भी बदलूँगी शृंगार भी करूँगी वेणी में मोती भी गूँथूँगी, आह!

रोने लगती है।

राहुल

माँ तुम तो रोने लगी। लो मैं भी न जाऊँगा।

छिन्नमी का आना

गोपा

नहीं बेटा! तुम जाओ। देवी गौतमी के साथ तुम जाओ।

राहुल

और तुम न चलोगी ?

गोपा

(फिर विचारों में खो जाती है। उसी दशा में पूछती है) कहाँ ?

राहुल

फिर बताऊँ ? मगर बताऊँगा तो तुम रोने लगोगी।

गोपा

(याद करके) चन्द्रग्रहण-स्नान को ?

राहुल

हाँ, आज चन्द्रग्रहण-स्नान के लिए रोहिणी के तट पर सारी दुनियां उमड़ पड़ेगी। देवी गोतमी ने कहा है कि यह पर्व कई दिनों बाद पड़ा है।

गोपा

बेटा, मेरे भाग्य में पर्व-स्नान लिखा नहीं है। यों तो घर में ही मेरे लिए नित्य पर्व-स्नान है।

राहुल

माँ तू तो हरएक बात को अपनी व्यथा से मिलाने लगती है।

गोपा

बेटा, तो किससे मिलाऊँ ?

फिर रोने लगती है।

राहुल

(दासी से) सुभद्रा देवी गौतमी से जाकर कह माँ नहीं चल रही हैं और मेरा भी विचार पलट गया है।

दासी

जो आज्ञा कुमार।

जाना चाहती है।

गोपा

ठहरो सुभद्रा ! देवी गौतमी के लिए आसन बिछाओ। वे देखो आरही हैं।

दासी आसन बिछाती है, गौतमी का प्रवेश, गोपा प्रणाम करती है। गौतमी आशीर्वाद देती हैं।

राहुल

(गौतमी से) माँ तो नहीं चल रही हैं।

गौतमी

मैंने समझ लिया था। इसी से रथ लौटा के जाने को कह आई हूँ।

गोपा

माँ मेरे कारण आप पर्व-स्नान के फल से वंचित रहेंगी। कुमार को साथ लेकर आप चली जायें न।

राहुल

दादीजी देखो माँ क्या कहती है ? हम लोगों को अकेला ही भेजना चाहती है।

गौतमी

तब अकेले कौन जायगा ?

गोपा

अकेले क्यों माँ ? कुमार को ले जाइये।

गौतमी

गोपा मेरा तो तीर्थ तू ही है। तुझे घर छोड़ कर कहाँ जाऊँ सोचा था, इसी बहाने घुमा कर तेरा जी कुछ बहला सकूँगी।

गोपा

सचमुच माँ ऐसा होगा क्या ? जी बहल जायगा मेरा ?

सिसकती है।

गौतमी

रहने दे बेटी। हम में से कोई नहीं जा रहा है।

राहुल

दादीजी !

गौतमी

वत्स, बोलो।

राहुल

क्या सन्यासी भी इस चन्द्रग्रहण के पर्व पर रोहिणी स्नान को आयेंगे ?

गौतमी

अवश्य ! गृहस्थ और संन्यासी सभी आयेंगे बेटा।

गौतमी राहुल के मुंह से आगे की बात सुनने के लिए उसकी ओर देखने लगती है।

राहुल

तब तो बड़ा अच्छा अवसर है।

गौतमी

हां बड़े बड़े ऋषि-मुनियों का दर्शन लाभ प्रकृति का सामीप्य अच्छा अवसर ही है वत्स।

राहुल

दादीजी, सुभद्रा कहती है कि पिताजी संन्यासी होगये हैं।

देवी गौतमी इस चर्चा से कुछ व्यस्त सी दिखाई देती है।

गौतमी

तो ?

राहुल

पिताजी भी कहीं आयें वहां तो हम उन्हें सहज ही पा लेंगे। मां से कहो न दादीजी कि वे जिनके लिए रात दिन रोती रहती हैं उन्हें पाने के लिए हम लोग चलें।

गोतमी

नहीं भूल है बेटा तुम्हारी। तुम्हारे पिता कभी किसी पर्व-तीर्थ में नहीं आते।

राहुल

(आश्चर्य सहित) किसलिए ?

गोतमी

वे एकान्तवासी तपस्वी हैं वत्स।

राहुल

कैसे जाना आपने ?

गोतमी

उनके लिए कौन कौन सा तीर्थ नहीं छान डाला मैंने। यदि अन्य संन्यासियों की तरह वे पर्वों और तीर्थों में आते जाते तो कभी मैंने उन्हें पा लिया होता।

राहुल

दादीजी, मेरा मन कहता है कि व रोहिणी किनारे हमें मिलेंगे।

गोतमी

बेटा, यह बात अपनी मां से कह।

गोपा

बेटा तू ने तो पिताजी को देखा नहीं है तू उनके लिए इतना अधीर क्यों है ?

राहुल

मैं उन्ह तेरे लिए खोज लाना चाहता हूं।

गोपा

क्यों बेटा ?

राहुल

तू उनके लिए रोती जो रहती है।

गोपा

पर तू उन्हें कैसे पहचानेगा ? तू तो चीन्हता नहीं है उन्हें।

राहुल

मैं चीन्हता हूं। तू ने सन्यासी का चित्र खींचा है वह मैंने देखा है। (गोतमी से) दादीजी ठीक उस संन्यासी जैसे ही तो हैं पिताजी ?

गोतमी

हां बेटा।

राहुल

तब क्यों न मैं उन्हें पहचान सकूँगा।

गौतमी

हाँ, यही तो।

राहुल

(गोपा से) माताजी, अब तो तुम्हें चलना चाहिए। पिताजी मेरी बात न मानें, न आवें, तो तुम मना लाना।

गोपा

(अश्रुसिक्त आँखों को धरती की ओर झुकाये रखकर) देखो, मैं नहीं जाऊँगी। तू हठ न कर।

गौतमी

राहुल वत्स, अब ज़ोर मत दे। तेरी माँ की इच्छा नहीं है।

राहुल

ऐसी बात नहीं है दादीजी।

गौतमी

तो क्या बात है?

राहुल

माँ पिताजी से रूठ गई हैं।

गौतमी

रूठ गई है?

]

राहुल

हां, मैं बताऊं क्यों ?

यशोधरा भीगी आंखों को ऊपर उठाकर विचित्र हास्य के साथ राहुल के मुंह की ओर देखती है।

गोतमी

राहुल वत्स तू बड़ा चतुर है। तेरी बातों ने तेरी मां को ?
कर लिया है।

राहुल

पिताजी चुपचाप चले गये। मां को यह बात बहुत खटकती है।
इस बात से मां इतनी रूठ रही है कि वे आ जायें तो वे मुंह से भी
बोलें।

गोपा

राहुल तुझे बातें बहुत आने लगी हैं।

राहुल

मैंने अपनी ओर से क्या जोड़ा है इसमें मां ? क्या सुमद्रा से
तुम्हीं ऐसा नहीं बोल रही थीं।

गोपा

क्या मैं इसलिए सुमद्रा से कोई बात करती हूं कि तू
... से कह दे ?

राहुल

(गौतमी से) देख लिया दादीजी। मैंने ठीक कहा था न कि माँ पिताजी से रूठ रही हैं।

गौतमी

तू ठीक कहता है वत्स।

राहुल

परन्तु क्या इतने साल तक इन्हें रूठी रहना चाहिए ?

गौतमी

नहीं रहना चाहिए।

राहुल

तो आप इन्हें समझाइये। ये हम लोगों के साथ बसें। उन्हें मनाय कर घर ले आवें।

गौतमी

यह सब तो वत्स तू ही अच्छी तरह कर सकता है। तू ही माँ को समझा। माँ बेटे के झगड़े में मुझ दादी का पड़ना ठीक नहीं।

गौतमी का प्रस्थान

राहुल

(गोपा से) मातेश्वरी देखो मैं और दादीजी दोनों ही चाहते हैं कि तू उस बात को भूल जा। प्रसन्न होकर हमारे साथ बस।

गोपा

हमें बसने की जरूरत नहीं है।

राहुल

हाँ, मैं बताऊँ क्यों ?

यशोधरा भीगी आँखों को
हास्य के साथ राहुल के मु

गोतमी

राहुल वत्स तू बड़ा चतुर है। तेरी बा
लिया है।

राहुल

पिताजी चुपचाप चले गये। माँ को
इस बात से माँ इतनी रूठ रही हैं कि
न बोले।

गोपा

राहुल तुम्हें बातें बहुत आने लग

राहु

मैंने अपनी ओर से क्या जोड़ा
तुम्हीं ऐसा नहीं बोल रही थीं।

गो

क्या मैं इसलिए सुमता से
नानीजी से कह दे ?

गोपा

इतने से ही क्या आया जाता है ? जैसे तुझे विश्वास है कि पर्व-स्नान के मेले में वे अवश्य मिलेंगे वैसे ही मैं आश्वस्त हूँ कि वे आयेंगे ।

राहुल

यहाँ तेरे पास ही आयेंगे ?

गोपा

हाँ ।

राहुल

पर ऐसी कौन सी वस्तु है तेरे पास माँ जिसके लिये उन्हें आना होगा ? दादीजी कहती हैं कि उन्हें घर-बार राजपाट किसी का मोह नहीं है । वे संसार त्यागी शुद्ध बुद्ध होकर विचरते हैं ।

गोपा

वे ऐसे ही हैं बेटा ! वे अपने त्याग की महिमा से धन्य हैं ।

राहुल

तब भी क्या उन्हें आना होगा तेरे पास ?

गोपा

मैं ऐसा ही मानती हूँ ।

राहुल

क्या पिताजी को हम नहीं लाना है ?

गोपा

वे स्वयं आयेंगे ।

राहुल

कब ?

गोपा

चन्द्रग्रहण हटने पर ।

राहुल

तुम्हें निश्चय है ?

गोपा

निश्चय है ।

राहुल

और न आये तो ?

गोपा

कैसे नहीं आयें । उन्हें आना पड़ेगा वे आयेंगे ।

राहुल

वे किससे डरते हैं जो आयेंगे ?

गोपा

इतने से ही क्या माया जाता है ? जैसे तुझे विश्वास है कि पर्व-स्नान के मेले में वे अवश्य मिलेंगे वैसे ही मैं आश्वस्त हूँ कि वे आयेंगे ।

राहुल

यहां तेरे पास ही आयेंगे ?

गोपा

हां ।

राहुल

पर ऐसी कौन सी वस्तु है तेरे पास मां, जिसके लिये उन्हें आना होगा ? दादीजी कहती हैं कि उन्हें घर-बार राजपाट किसी का मोह नहीं है । वे संसार त्यागी बुद्ध बुद्ध होकर विचरते हैं ।

गोपा

वे ऐसे ही हैं बेटा ! वे अपने त्याग की महिमा से धन्य हैं ।

राहुल

तब भी क्या उन्हें आना होगा तेरे पास ?

गोपा

मैं ऐसा ही मानती हूँ ।

राहुल

तब तो माँ तेरी महिमा पिताजी के त्याग की महिमा से भी बढ़कर है ?

गोपा

नहीं बेटा, मैं ऐसा नहीं कह सकती ।

राहुल

दादाजी तो कई बार ऐसा कहते हैं माँ ।

गोपा

क्या कहते हैं दादाजी ?

राहुल

वे कहते हैं तूने अन्तःपुर में रहकर तपोवन से कठिन तपस्या की है । तेरी तपस्या और त्याग ने पिताजी के तप और त्याग को फीका कर दिया है ।

गोपा

नहीं बेटा ।

राहुल

तो क्या दादाजी असत्य कहते हैं ?

गोपा

असत्य नहीं । क्या दादाजी कभी असत्य बोल सकते हैं ?

राहुल

(सहास्य) माँ तू बड़ी भोली है। दादाजी कभी असत्य नहीं बोल सकते और जो वे कहते हैं वह ठीक नहीं है यह दोनों बात एक साथ कैसे हो सकती हैं ?

गोपा

हो सकती है बेटा। तेरे दादाजी मुझे उसी तरह प्यार करते हैं जैसे मैं तुझे करती हूँ। इसी से वे मेरे छोटे से काम को भी बड़ा मान देते हैं।

राहुल

पर तू ने इतने सालों से केशों में कघी नहीं की है। इस मैली पुरानी साड़ी को बरसों से नहीं बदला है। अपने महल में कुशासन और चंदन के पाटे के सिवा कुछ रहने नहीं दिया है। यह सब क्या त्याग नहीं है, तेरा ?

गोपा

जो मुझे नहीं सुहाता है उसे हटा देना त्याग नहीं होता। तपोवन के असह्य कष्टों से इसका कोई मेल नहीं है बेटा।

राहुल

मेरी समझ में नहीं आता कि फिर क्यों पिताजी तेरे पास दौड़े आयेंगे ? दीन-हीन गोपा को क्यों नहीं शुद्ध बुद्ध महिमामय भगवान् की खोज में चलना चाहिए ?

धीरे धीरे राहुल को जकड़नेवाली उसकी बाहें शिथिल होती हैं और उसे मूर्छा आ जाती है। कुब्जा गुलाबजल लाने दौड़ती है। गौतमी अंक पर गोपा का सिर रख लेती है। सुकोमल वस्त्र से उसके मुख पर हवा करते हैं।

राहुल

माँ माँ, अरे माँ को क्या होगया ?

मंच पर उसकी आवाज़ गूँजती है पर कोई उत्तर नहीं देता। सबका ध्यान मूर्च्छित गोपा की ओर है।

पर्दा

रचनाकाल
अप्रैल १९४१

चीवरधारिणी

नट

बुद्धदेव	बौद्धधर्म के संस्थापक
आनन्द	बुद्धदेव का शिष्य
शुचिता	पुत्र शोक से दुखी एक नारी
पटाचारा	एक भिक्षुणी
सौभद्र	बुद्धदेव का एक शिष्य
कृसा गौतमी	मृत बालक की माता

भगवान् बुद्ध आसन पर विराजमान। आनन्द आदि कई श्रमण शिष्य उनके सम्मुख बैठे भगवान की वाणी का अमृत पी रहे हैं। भगवान का भक्त पुत्र शोक व्यथित एक नारी जिसके आगे पीछे कोई नहीं। अपनी इकलौती संतान के अवसान पर जो मार्ग में विलाप कर रही थी और जिसे संघ की एक भिक्षुणी भगवान के चरणों में ले आई।

बुद्धदेव

शुचिता के मुख की ओर देखो आनंद! इसे अभी अभी पुत्र शोक सहना पड़ा है।

आनंद

पटाचारा से बढ़ कर तो उसका दुख नहीं हो सकता। वह तो सर्वस्व गंवाकर आई थी!

बुद्धदेव

इसकी अकेली संतान भी इसका सर्वस्व ही थी आनंद।

आनंद

मा शुचिता' कह कर जिस क्षण भगवान ने इसे बुलाया उसी क्षण इसके जन्म जन्म के दुख विमुख हो गये!

बुद्धदेव

अपनी सहज साधना से सत्य का परिबोध करनेवाली भगवती पटाचारा ने पद प्रक्षालन करते करते ज्ञान लाभ किया। एक बार दो बार तीन बार पैरों का धोवन पहले यहाँ फिर वहाँ और फिर उससे आगे जाकर सूख गया। उसी घटना का अनुशीलन करने से उन्हें प्रकाश मिला। उन्होंने सोचा— इसी तरह प्राणी पहली अवस्था में मरते हैं, दूसरी अवस्था में मरते हैं तीसरी अवस्था में भी मरते हैं। सभी मरणशील हैं सभी अनित्य हैं। मोह और ममता के प्रति वैराग्य का उदय हुआ। आसक्ति की भावना का नाश हो गया। दुर्बलता जाती रही। वे भिक्षुणी हुईं।

सुजाता

महात्मन् आप लोग जिन्होंने संसार का त्याग कर दिया है गृहस्थ के दुःख-सुख से बहुत ऊँचे उठ गये हैं। आप धन्य हैं!

बुद्धदेव

देवी आओ बुद्ध-शासन में रह, विमुक्त चित्त भगवती पटाचारा की अमृतवाणी का पान करो। तुम्हारा कल्याण होगा। तुम्हारा चित्त शांत होगा। उद्वेग, क्षोभ और शोक का नाश होगा। लो, वे यहीं आ रही हैं।

पटाचारा का प्रवेश

पटाचारा

पति-पुत्र, माँ-बाप सबसे वियुक्त निराधार हतभाग्य नारी को शांति के अनंत साम्राज्य में प्रतिष्ठित करनेवाले करुणानिधान विश्व त्राता भगवान् बुद्धदेव की जय हो !

बुद्धदेव

(हाथ ऊँचा करके आशीर्वचन कहते हैं) कल्याण हो देवी अपने अमृतोपम उपदेश से दुखियारी सुचिता को कल्याण-मार्ग में प्रवृत्त कराओ। (सुचिता की ओर इंगित करते हैं।)

पटाचारा

भगवान् के संमुख मैं उपदेश करूं ? अच्छी बात है आओ। (सुचिता को एक ओर लेजाकर) बहिन अ-शांतों का दमन करनेवाले पूर्ण निर्भय पुरुष इन्हीं सम्यक संबुद्ध की करुणा ने मुझ जैसी अभागिनी के संताप का एक क्षण में नाश कर दिया। पुत्रशोक रूपी शल्य अब मेरे चित्त को दुखी नहीं करता।

सुचिता

(आँखों के आंसू पोंछती तथा पटाचारा को प्रणिपात करती हुई) मेरा लाल मेरा लाडला, मेरा सुहाग ! हाय ! मैं कैसे धीरज धरूं ? देवी ! इतनी शांति इतनी सद्बुद्धि कहाँ से लाऊं ?

पटाचारा

यही दशा मेरी थी बहिन। इससे भी बुरी इससे भी गई-बीती।

शुचिता

मेरा मन तो शांत नहीं हो रहा, देवी! हृदय भीतर से विलाप कर रहा है। मैं बड़ी अभागी हूँ। भगवान् के आश्रय में भी शान्ति नहीं पा रही!

पटाचारा

अपना अपना कह कर तुम जिसके लिये रो रही हो उसके संबंध में तुम यह भी तो नहीं जानतीं कि वह किस पथ से आया था और किस पथ से चला गया? फिर विलाप क्यों कर रही हो? और यदि यह मालूम भी हो तो भी तुम क्यों रोओ? क्योंकि यह तो प्राणियों का धर्म ही है। जो बिना पूछे आया था और बिना पूछे चला गया उसके लिये रोना क्या? सोचो तो जरा जो कुछ दिन के लिये कहीं से आया था तो क्या लौट कर नहीं जायगा? जो एक मार्ग से आता है उसे दूसरे मार्ग से जाना ही होता है। ऐसे प्राणी के लिए रोने धोने और विलाप करने से कोई क्या पायेगा? जिस क्रम में आना उसी क्रम में चला जाना फिर शोक किसके लिए? बोलो, बताओ। चुप क्यों हो? शुचिता बहिन!

शुचिता

(पटाचारा को श्रद्धा सहित सिर झुकाकर) भगवती की निर्मल वाणी का प्रसाद पाकर मैं कृतार्थ हुई। मेरी आँखें खुल रही हैं

मैं देख पा रही हूँ कि मेरा शोक कितना निराधार था ! जो मेरा था ही नहीं उसे अपना मान कर मैं दुखी हो रही थी। मोह का वह परदा आपने उठा दिया। आर्यमार्ग का अनुसरण करनेवाली देवी, मुझे अपनी छाया में स्थान दो। इस जीवन और इस काया को पवित्र करने के हेतु सुगत भगवान् ने निर्मल विचारों की जो मन्दाकिनी बहाई है उसमें स्नान करने की मुझे आज्ञा दो, साध्वी !

पटाचारा

तो बोलो आज मैं भगवान् बुद्ध, उनके धर्म तथा संघ की शरण लेती हूँ।

शुचिता

आज मैं भगवान् बुद्ध, उनके धर्म तथा संघ की शरण लेती हूँ।

आश्रम के बाहर कोलाहल सुनाई पड़ता है। सब लोग उत्सुक होकर देखते हैं। पटाचारा और शुचिता भी देखने को जाती हैं।

आनन्द

(उच्चस्वर से) कैसा कोलाहल है सोमक ?

सोमक

एक स्त्री मृत बालक को चिपकाये आश्रम में घुसी आ रही है। श्रमण लोग अशुचिता के विचार से उसे रोक रहे हैं, परन्तु

यह मानती कब है ? पता नहीं भगवान् के पास यह मुर्दे को लाकर क्या करेगी ? मूर्ख नारी ।

आनन्द

गुरुदेव से निवेदन करूँ ।

सौम्यता से आगे बढ़कर शान्ति-समाधि में लीन गुरुदेव से निवेदन करता है ।

आनन्द

भगवन् मुर्दे सहित एक स्त्री आश्रम के भीतर चली आ रही है ।

गुरुदेव

रोक क्यों रखा है, आने दो उसे ।

आनन्द

मुर्दे को भी ले आने दें ?

गुरुदेव

मुर्दे में उसका मोह है तो ले आने दो ।

आनन्द

(सौम्य को इशारे से पास बुला कर) सौमाट ले आओ उसे ।

सौम्य

मुर्दे सहित ?

आनन्द

हाँ।

सौभद्र

गुरुदेव का आदेश है ?

आनन्द

और क्या आनन्द ऐसा आदेश देने का साहस कर सकता है ?

सौभद्र

(सौभद्र खिड़की से झांककर लौट आता है) वह आ रही है। आनंद, वह आ रही है। कैसी आंधी सी चली आ रही है !

आनन्द

(देख कर) अरे इतनी बड़ी लाश ! क्यों वह लिये है उसे भला ?

कृशा अपने बालक की लाश को भुजाओं में भरे प्रवेश करती है। वस्त्र उसके अस्तव्यस्त हो रहे हैं। बाल बिखरे हैं। मुख की कांति विकृत है। तेज तेज पग धरती हुई वह आती है।

कृशा

मैं गरीबनी अपने बच्चे को दवा नहीं दे सकी उसका उपचार नहीं कर सकी। मेरी आंखों का तारा औषध बिना इस दशा को पहुंच गया। कोई इसे औषध दो कोई इसे बचा लो। कोई दुखिया

कृशा पर दया करो।

आनन्द

किसको औषध खिलाती हो कृशा!

कृशा

अपने बच्चे को, अपने इस लाल को! श्रमण, इसे औषध दो।

(पुनः बच्चे का मुँह चूमती है।)

आनन्द

इस शरीर में अब प्राण नहीं हैं, कृशा। प्राण बिना शरीर मिट्टी होता है। यह तो मिट्टी है, तुम्हारा बच्चा यह नहीं है।

कृशा

यह मिट्टी है, मेरा बच्चा नहीं है!

आनंद

यही बात है। मिट्टी के लिए वृथा मोह मत करो। मिट्टी को मिट्टी में मिल जाने के लिए छोड़ दो।

कृशा

श्रमण, मैं विनय करती हूँ। माता की दृष्टि से एक बार इस शरीर को देखो। फिर कहो कि यह मिट्टी है।

आनंद

इस दुनिया में सत्य को सत्य माने बिना निस्तार नहीं। इस मिट्टी से चिपटी रह कर तुम पुत्र को नहीं पा सकती।

कृशा

मैं पा सकती तो यहाँ क्यों आती भाई ? मुझे भगवान के पास ले चलो। वे मेरी व्यथा को समझेंगे। मेरे बच्चे को औषध देंगे। अमृतसंजीवनी पीकर वह उठ बैठेगा।

मानव

भगवान् इधर विराजते हैं, कृशा !

कृशा को बुद्धदेव के सामने कर देता है।

कृशा

भगवान् मेरे पुत्र को औषध दो।

बुद्धदेव

अवश्य दूंगा।

हाथ से शान्त होने का इशारा करते हैं।

कृशा

मैं शान्त कैसे रहूँ देव मेरा बच्चा हाय, वह साँस भी तो नहीं लेता। एक औषध बिना वह यों हो रहा है— मेरा लाल ! हिलता डोलता भी नहीं !

बुद्धदेव

कृशा तुम सचमुच इस बालक को जीवित देखना चाहती हो ?

कृशा

(कुछ शान्त होकर) हे अमृतपुरुष आप भी ऐसा पूछते हैं !

कौन ऐसी माँ होगी जो अपने बच्चे को हंसता-खेलता न देखना चाहे।

बुद्धदेव

यह ठीक है परन्तु सब माताएं तभी तक बच्चे से मोह करती हैं जब तक वह जीवित है। मर जाने पर तुम्हारी तरह कोई उसे चिपटाये नहीं फिरती।

कृशा

हृदय नहीं मानता है मेरा। मैं उसे हंसता-खेलता देखना चाहती हूँ भगवन्।

बुद्धदेव

अलौकिक बात चाहती हो तुम !

कृशा

इतना भी अलौकिक नहीं कर सकते हैं आप ! आप तथागत कहलाते हैं अमृतपुत्र। बड़ी प्रशंसा सुन कर मैं आई हूँ भगवन् ! आप भी मुझे निराश करेंगे ?

बुद्धदेव

निराश करूं मा यह मैंने कब कहा है ?

कृशा

तो हे दयानिधान, मेरे ऊपर तरस खाओ। मेरे बालक के गले में दो बूंद अमृत डाल दो। वह जी उठे !

बुद्धदेव

वही होगा। कृशा गौतमी वही होगा।

कृशा

कृशागौतमी आपके चरणों में गिरती है देव। जल्दी करें। शीघ्रता करें। एक क्षण भी देर असह्य है स्वामी!

बुद्धदेव

दुनिया के आदि से अब तक जो कभी नहीं हुआ वही तुम चाहती हो कृशा!

कृशा

जो कुछ भी हो। आप जल्दी करें कृपानिधान! मेरा धीरज छूटा जा रहा है। साक्षात् भगवान् की शरण आने पर भी इतनी देर?

बुद्धदेव

कुछ देर नहीं है। अभी एक क्षण में वही होगा जो इस मृत्यु लोक में कभी नहीं हुआ।

कृशा

धन्यवाद। धन्यवाद। जल्दी करें प्रभो!

बालक की लाश को पृथ्वी पर लिटा देती है।

बुद्धदेव

अभी लो लेकिन जरा इतना तो करो कृशागौतमी...

कृशा

गुरुदेव आज्ञा कीजिये। मैं अपने बच्चे का जीवन पाने के लिए क्या नहीं कर सकूँगी? बोलिये बोलिये प्रभो!

बुद्धदेव

कोई बड़ा काम नहीं है। तुम जाकर किसी गृहस्थ के घर से थोड़ी सी सरसों ले आओ। ले आ सकोगी?

कृशा

(प्रसन्न होकर) यह कौन बड़ी बात है। मैं अभी आती हूँ।

जाने को उद्यत होती है।

बुद्धदेव

परन्तु सुनो देवी—सरसों ऐसे घर से लाना जहाँ कभी कोई मरा न हो।

कृशा

यही करूँगी।— अभी लेकर आती हूँ। अभी, दो क्षण में।

शीघ्रता से निष्क्रमण; आनन्द का प्रवेश।

आनन्द

देव, मृत बालक जी उठेगा?

बुद्धदेव

कृशा सरसों ले आयेगी?

आनंद

यदि वे आयें ?

बुद्धदेव

तो भी उठेगा।

आनंद

अलौकिक बात होगी। लोगों के विश्वास हिल उठेंगे।

बुद्धदेव

थोड़ा ठहरो, देखो। बुद्ध का प्रयास विश्वासों को हिलाने के लिए नहीं जमाने के लिए है।

आनंद

किन्तु गुरुदेव !

बुद्धदेव

बुद्ध जादू नहीं जानता आनन्द।

आनन्द

यह तो जादू से भी विस्मयकर होगा।

बुद्धदेव

विस्मय की इसमें कोई बात नहीं है। आनन्द शुद्ध सत्य को लेकर अभी कृषा आनेवाली है।

आनन्द

समस्त चैत्यवन में और नगर में भी इस समय यही चर्चा है।

भगवान् कृशा के मृत बालक को जीवनदान दे रहे हैं।

बुद्धदेव

(आश्चर्य) बात यहाँ तक पहुँच गई है।

आनंद

हाँ गुरुदेव देखिए न चारों ओर जनसागर उमड़ा चला आ रहा है।

बुद्धदेव

(दृष्टि घुमाकर देखते हैं) आनंद, तुम ठीक कहते हो, परन्तु यह छोटी सी बात, उसके लिए दुनियां इतनी आतुर हो रही है!

आनन्द

यह क्षुद्र बात नहीं है प्रभो। असंभव को संभव होते देखने से बढ़कर बड़ी और अचरज की बात क्या हो सकती है

बुद्धदेव

(गंभीरता से) हूँ।

आनंद

परन्तु कहीं ऐसा न हो।—

बुद्धदेव

अर्थात् सबको निराश जाना पड़े। कृशा का मृत्यु को हुआ बालक जी न उठे ?

आनन्द

हाँ भगवान्, यदि ऐसा हुआ तो बड़ा अपवाद फलेगा।

बुद्धदेव

डरने की कोई बात नहीं है आनन्द। कुमार गोमती की सफलता असफलता पर सब कुछ निर्भर करता है। —बड़ी देर लगाई उसने। देखो आरही है कि नहीं।

आनन्द

(अच्छी तरह दूर तक चारों ओर देखकर) अभी तो कहीं नजर नहीं आ रही है।

बुद्धदेव

कहाँ से नजर आये। बेचारी मोहाप मारी।

(साधु साध्वियों और नर नारियों की भीड़ से तपोवन तमाराम भर जाता है। लोग उच्चस्वर से चिल्लाते हैं 'भगवान् बुद्ध की जय हो। कुछ विशिष्ट व्यक्ति आगे बढ़कर वहाँ तक आजाते हैं जहाँ कुमार का मृत बालक पड़ा है। कोई कोई यह देखने का प्रयत्न करते हैं कि बालक मरा भी है या नहीं।)

आनन्द

(खड़े होकर हाथ ऊँचे करके भीड़ से बैठने का आदेश करता है।) बैठ जाओ भाई। भगवान् तथागत की इच्छा है कि सब लोग वृक्षों की छाया में शान्ति से बैठ जायें।

(अधिकांश लोग बैठ जाते हैं । अचानक भीड़ में कोलाहल मचता है । सब कहते हैं 'कृशा आरही है । कृशा आरही है । ')

आनन्द

(आँखों के आगे हथेली की छाया करके दूर से आती कृशा को पहचान कर) कृशा गोतमी आ रही है देव ।

बुद्धदेव

(निर्विकार भाव से) आने दो ।

(ज्यों ज्यों कृशा समीप आती जाती है भीड़ में कोलाहल बढ़ता जाता है कृशा वेणुवन में प्रवेश करके भगवान् बुद्ध के समीप पहुंच जाती है ।)

आनन्द

(कृशा को लक्ष्य कर) कृशा गोतमी, भगवान् इधर विराजते हैं ।

(कृशा भगवान् के सामने आती है)

बुद्धदेव

(गंभीर स्वर से) कृशा गोतमी, आओ । मेरा विचार है अवश्य ही तुम सरसों ले आई होगी ।

कृशा

(अपने दोनों खाली हाथ ऊपर उठाकर) कहां से लाई भगवन् !

बुद्धदेव

(कुछ आश्चर्य का भाव दिखाकर) क्यों, अरे इतने बड़े

जनाकीर्ण नगर में से तुम एक मुट्ठी सरसों भी नहीं ला सकी !

कृशा

(निराश भाव से) नहीं भगवन् नहीं ला सकी । मैं एक सिरे से दूसरे तक घूम आई । कहीं कोई घर नहीं मिला जहाँ सरसों मिल सकती ।

बुद्धदेव

यह कैसी बात ! इतने बड़े नगर में मुट्ठी सरसों नहीं !

कृशा

सरसों बहुत है पर मृत्यु से अछूता घर एक भी नहीं ।

बुद्धदेव

मृत्यु से अछूता एक भी घर नहीं !

कृशा

मृत्यु सभी घरों में झाँक चुकी है भगवन् । कहीं से पुत्र कहीं से पति कहीं से पत्नी, कहीं से पुत्री कहीं से पिता कहीं से माता को वह ले जा चुकी है ।

बुद्धदेव

सच ।

कृशा

सच क्या, मृत्यु का चक्र बराबर चल रहा है । कोई भी— गृहस्थ उससे मुक्त नहीं ।

बुद्धदेव

कृशा गोमती के बालक का क्या होगा ?

कृशा

होगा क्या ? जिस शरीर का मृत्यु अनिवार्य परिणाम है उसका क्या होने को है ? उसके लिए शोक ही वृथा प्रतीत होता है।

बुद्धदेव

(प्रसन्न होकर) इतना समझ गई हो तुम !

कृशा

भंते ! आपकी कृपा से मुझे सहज ही ज्ञान का आलोक मिल गया ! अमरत्व को देने वाली शुभ दृष्टि से मैं इस समय सम्पन्न हूं।

बुद्धदेव

(मृत शरीर की ओर इङ्गित करके) उसके लिए तुम्हें शोक नहीं है अब ?

कृशा

शरीर जो मरण का ग्रास है उसके लिए मैं शोक करूं ? क्यों न मैं उस आत्मा का अभिनन्दन करूं जो नित्य है जो अमृत है !

बुद्धदेव

सही हो सही हो। अमरत्व को देने वाले आर्य अष्टांगिक

मार्ग की अधिकारिणी बनो कृशा!

कृशा

भगवान् मुझे प्रव्रज्या दें। मैं बुद्ध धर्म और संघ की शरण जाती हूँ।

बुद्धदेव

कृशा, कल्याणी! तुम इन चीवरधारिणी भिक्षुणियों में अग्रणी बनो। धर्म में तुम्हारी अटल दृष्टि हो। अमृतपुत्रिके, जाओ मृत्यु और शोक की इस दुनियाँ में तुम शाश्वत आनन्द की ज्योति जगाओ।

कृशा

(*प्रतिज्ञा करती हुई*) बुद्ध की जय हो, धर्म की जय हो संघ की जय हो।

(उपस्थित जनसागर में रह रहकर यही वाक्य दोहराये जाते हैं। तुमुल कंठ से निःसृत जयघोष से आकाश गूँज उठता है। आनंद आकर भगवान् के चरणों में गिरता है।)

बुद्धदेव

क्यों आनन्द क्या बात है?

आनन्द

संशय के बादल छिन्न भिन्न हो गये हैं देव! मुझ अपराधी को क्षमा करें।

रचनाकाल
सितम्बर १९४६

लाख का घर

पात्र

कुन्ती	पांडव माता

स्मृति-पात्र

छाया	सत्या ब्राह्मणी का प्रेत
युधिष्ठिर	कुन्ती का ज्येष्ठ पुत्र
पांचाली	पांडवों की स्त्री पांचाल देश की राजकुमारी
अर्जुन	युधिष्ठिर का भाई महाभारत का प्रसिद्ध योद्धा
भीम	कुन्ती का पुत्र महाभारत का योद्धा

[निबिड़ अन्धकार घनघोर शून्यता में सारा जगत सो रहा। वायु स्तब्ध। वृक्ष मूक। नदी का प्रवाह स्थिर। माता कुन्ती की आँखों में निद्रा नहीं। हृदय मन और नाड़ी—असमान अपूर्व हलचल से आंदोलित। महाभारत के यशस्वी विजेता पुत्रों की जननी अपने शयनकक्ष से निकल प्रकृति की गोद में हृदय का मंथन करती हुई डोल रही है।]

कुन्ती

धर्मराज धर्मराज ! (कोई उत्तर न पाकर) आखिर धर्म की जय हुई। अधर्म का नाश हुआ। इसके सिवा क्या होना था ? राजमाता कुन्ती के लिए न लिए उसके यशस्वी पुत्रों ने धर्म का उद्धार किया। अ मुक पुत्रों के स्वामियों की माता को आज किस बात की कमी है ? उसके इशारे पर आज उसके पराक्रमी बेटे धरती से स्वर्ग तक स्वर्णपथ तैयार करा सकते हैं। धर्मराज धर्मराज ! बेटा तुम्हारी माता सदेह स्वर्ग जाना चाहती है। धर्म का ऐसा सेतु बनाओ कि उसका मार्ग सुगम कर दो।

(उसके सामने सहसा एक स्त्री की छाया प्रकट होती है।)

कुन्ती

(रात्रि की शांति को दहलाती हुई) भीम भीम !

छाया

भीम से मैं डरती नहीं हूँ।

कुन्ती

अर्जुन, अरे ओ पार्थ, तेरा गांडीव कहाँ गया रे ?

छाया

गांडीव हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता— राजमाता !

कुन्ती

अभी हमारा धर्म इतना क्षीण नहीं हुआ है। गांडीव के बिना केवल धर्म के प्रताप से ही तुम्हें ठीक किया जा सकता है।

छाया

धर्मराज की माता, आह धर्म की बात कहती हो तुम।

कुन्ती

धर्म की बात हम नहीं करेगा तो कौन करेगा ? धर्म का सहारा लिए बिना कोई इतना बड़ा युद्ध जीत सकता है ?

छाया

धर्म और पुण्य के बल पर ही तुमने महाभारत जीता है ?

कुन्ती

देखा नहीं तुमने ? लोक लोकान्तर में विख्यात धर्मराज की

धर्मपरता के बिना क्या यह सब संभव हो सकता था ?

छाया

हा–हा–हा !

कुन्ती

तुम धर्म का उपहास करती हो !

(मुंह तमतमा जाता है ।)

छाया

रामगाथा वैरों से जिसे तुमने लपेटा है वह धर्म नहीं है। उस धर्म से महाभारत जीतने का तुम्हारा गर्व मिथ्या है।

कुन्ती

क्या कहा ?

छाया

विभ्रमित न हो कुन्ती ! सुनो हम गरीबों के रक्त पर आज तुम्हारे साम्राज्य नींव की अड़ी है।

कुन्ती

छि छि । धर्मराज के लिए ऐसे कुवाक्य !

(कानों पर हाथ रखती है)

छाया

कानों को जितना ही बन्द करलो रानी, लेकिन यह तथ्य तुम्हें सुनना और मानना पड़ेगा कि साम्राज्य का वैभव तप और

- त्याग से नहीं प्राप्त हुआ है।

कुन्ती

तुम्हारे आशीर्वाद से हुआ है ?

छाया

हमारे आशीर्वाद से न सही हम जैसों के बलिदान से सही। हमारे रक्त की होली खेल कर धर्म की यह ध्वजा इतनी ऊंची फहराई गई है।

कुन्ती

इस तरह उद्दंड भाव से मुंह चलाये जाने वाली तुम कौन हो नारी ?

छाया

गर्व के पहाड़ पर बैठी हुई तुम्हें बताना पड़ेगा कि मैं कौन हूं। अच्छा तो देखो— (इशारा करती है शून्य में एक विशाल भवन की रूपरेखा प्रकट होती है।)

कुन्ती

(आश्चर्य से कांपती होकर चिल्लाती है) लाख का घर। वारणावत में लाख का घर! दुष्ट शकुनी की रचना! ओह कैसा ...ल, कैसा भयानक षड्यन्त्र था यह!

छाया

मैंने कहा था न कि तुम भूल नहीं सकती मुझे।

कुन्ती

पर तुम कौन हो ? लाख के घर से तुम्हारा संबंध ?

छाया

मुझसे मत पूछो देखती जाओ— (पाँचों पांडव और कुन्ती लाख के घर में ब्रह्मभोज की तैयारी में लगे दिखाई देते हैं। एक गरीब ब्राह्मणी अपने पाँच पुत्रों के साथ आती है।)

कुन्ती

(सिर से पैर तक पसीने से तर हो जाती है।) स्वागत ब्राह्मणी! (छाया की ओर देखती है।) अरे! तुम्हीं तो हो — तुम्हारी ही प्रतिमूर्ति तो खड़ी है!

छाया

(कुछ से कुछ न कहकर चली और इंगित करती है। तत्पर ब्राह्मणी को भोजनोपरान्त ठहरने के लिए कुन्ती बड़े आग्रह से रोक रही है। सुन्दर रेशमी बिछौनों पर माँ बेटों को शयन करने को कहती है। वे सो जाते हैं। अर्द्ध रात्रि का दृश्य। भीम मशाल लेकर आग लगाते हैं। चारों पांडव और कुन्ती उसे मदद कर रहे हैं। लाख भक भक कर वेग से जलती है। भीतर ब्राह्मणी सहित उसके पाँचों लड़के छटपटाते हुए जलते हैं।)
देखो, देखो कुन्ती अपने धर्म के कुकृत्यों को जिसके लिए तुम्हारे मर्म का पार नहीं।

कुन्ती

(आवेश में आग की ओर दौड़ती हुई) बचाओ बचाओ।

सत्या और उसके बेटों को ।

छाया

हा-हा-हा राजमाता कुन्ती ! अधीर मत हो। इन्हीं धर्म और पुण्य के खंभों पर सदेह स्वर्ग जाने का सेतु बनेगा ! बुलाओ अपने धर्ममूर्ति धर्मराज को वह भी तुम्हारे साथ साथ अपने कीर्तिस्तम्भों की असलियत का अवलोकन कर ले।

कुन्ती

धर्मराज, धर्मराज बेटा दौड़ो। अपनी माता के विश्वास की भीत को ढहने से पहले बचालो।

छाया

(सत्या के बेटों से) सत्यासुतो अपना अभियोग उपस्थित करो। प्रपञ्च के आधार पर रखी हुई विश्वास की नींव डगमगाने लगी है।

सत्यासुत

(हाथ ऊँचे करके चिल्लाते हैं) पाण्डवों के जिस राज्य को धर्मराज कहा जाता है उस पर ब्रह्महत्या जैसे सैकड़ों कलंक लगे हुए हैं।

कुन्ती

यदि यह सत्य है यदि यह प्रमाण है, तो स्वर्गसेतु के बजाय नर्क-द्वार वरण करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं। अरे,

कितना मिथ्या समझा था मैंने !

छाया

मिथ्या, एकदम मिथ्या । एक गरीब ब्राह्मणी और पाँच ब्राह्मणकुमारों की हत्या करके तुमने अपने प्राण बचाये !

कुन्ती

मुझे दुख है छाया मुझे दुख है ।

छाया

दुख, हा-हा । इन बड़े आदमियों को नहीं होता जिनका इतिहास इसी तरह के पापाचारों से निर्मित होता है ।

कुन्ती

तो क्या हमारे जीवन में गर्व करने लायक कुछ भी नहीं है ?

छाया

कुछ भी नहीं एक अंश भी नहीं ।

कुन्ती

तो इस अकारथ जीवन को जीकर मैं क्या करूँ ?

छाया

तुम्हारा और तुम्हारे यशस्वी बेटों का जीवन पाप की एक लम्बी कहानी है । दुनिया में जितना ही दर्प और जितना

ही वैभव प्रदर्शित करो, आखिर इस प्रवंचना को नष्ट होना है—। इतनी जल्दी तुम अपने पापों से छूट नहीं सकती

[सत्या अपने पाँचों बेटों सहित अदृश्य हो जाती है ।]

कुन्ती

(आकाश को कम्पित करनेवाली चीख से रात्रि की सघन कालिमा को स्तब्ध मुखर कर देती है ।) बचाओ, बचाओ । पार्थ इस भयंकर आग से जो चारों ओर लग रही है अपनी माता की रक्षा करो ।

इधर उधर भागती है । परदे के पीछे कोलाहल होता है । अर्जुन पांचाली भीम युधिष्ठिर सभी चीखते भागते मंच पर आ जाते हैं ।

अर्जुन

माता, कहाँ हो ?

पांचाली

माता, कहाँ हो ?

भीम

माता, कहाँ हो ?

युधिष्ठिर

मातेश्वरी हम आ गये ।

कुन्ती

रक्षा... करो ।

संज्ञाशून्य होकर धरती पर गिरती है । सब दौड़ कर हाथों हाथ उठा लाते हैं ।

पर्दा

रचनाकाल
मई १९४१

हठ

नट

राम	अयोध्या के राजा दशरथ के बेटे
कौशल्या	राम की माता
सीता	राम की पत्नी
मांडवी	राम के भाई भरत की पत्नी
उर्मिला	राम के छोटे भाई लक्ष्मण की पत्नी
	और दासी आदि

सूर्योदय से पूर्व

रेशमी वस्त्र पहने सीता इधर उधर फिर रही हैं। कहीं कोई सि
अथवा उसे आदेश देती हैं। घर की दासियां भी काम में लगी हैं। भी
से एक दासी आती है।

दासी

स्वामिनी, माता कौशल्या ने कहलाया है कि आप रात भ
जागती रही हैं। थोड़ा विश्राम कर लें।

सीता

माताजी ने कौन आंख लगा ली है? वे भी तो जाग
रही हैं।

दासी

आपको अभी अभिषेक के कार्य में बैठना होगा।

सीता

जानती हूं पर अभी कितने काम पड़े हैं।

दासी

हम लोगों को बता दीजिए। हम कर लेंगी।

सीता

अवश्य, लेकिन मेरा रहना तो जरूरी है।

दासी

आपका एक बार आदेश ही काफी है।

सीता

अच्छा देखो, अभिषेक के लिए आवश्यक सामग्री पहुंच गई है। केवल तीर्थजल दूर्वा, रोली और अक्षत भेजने शेष हैं।

दासी

जो आज्ञा।

सीता

और सुनो। देखो आर्यपुत्र गुरु वशिष्ठ का आशीर्वाद पाकर ज्यों ही आवें त्यों ही मुझे बताना।

[जाने का नाट्य

दासी

जो आज्ञा

सीता

(लौटकर) देखो अभिषेक के समय पहनने के लिए आर्यपुत्र के वस्त्र कहां रक्खे हैं तुम्हें मालूम है। देवर लक्ष्मण जिस समय मांगें तुरन्त दे देना।

दासी

जो आज्ञा।

सीता

मांडवी, उर्मिला और श्रुतिकीर्ति को कहला दो कि वे जरा मुझसे अभी आकर मिल लें। पीछे निमन्त्रित महिलाएं आने आने लग जायेंगी।

दासी

जो आज्ञा।

सीता

नहीं ठहरो उन्हें मेरे पास मत बुलाओ। केवल इतना कहला दो कि देवी अरुन्धती के आसन के पास ही माता कौशल्या का आसन होगा। मझली माँ से मैंने पुछवाया है। प्रात होने पर कहला दूंगी।

[जाने को होती है

दासी

जो आज्ञा।

सीता

एक बात और। देखो, द्वार से कोई याचक खाली हाथ लौटकर न जाय। जो कोई जो कुछ मांगे उसे वही दिया जाय।

अस्तार, दासी अन्य दासियों को बुलाकर अन्दर की सारी व्यवस्था

धर्मपरता के बिना क्या यह सब संभव हो सकता था ?

छाया

हा–हा–हा !

कुन्ती

तुम धर्म का उपहास करती हो !

(मुह तमतमा जाता है ।)

छाया

राजमाता, वेदों ने जिसे तुमने स्वीकारा है वह धर्म नहीं है। उस धर्म से महाभारत जीतने का तुम्हारा गर्व मिथ्या है।

कुन्ती

क्या कहा ?

छाया

विभ्रमित न हो कुन्ती ! सुनो हम गरीबों के रक्त पर आज तुम्हारे साम्राज्य नींव की खड़ी है।

कुन्ती

छि छि. । धर्मराज के लिए ऐसे कुवाक्य ।

(कानों पर हाथ रखती है)

छाया

कानों को कितना ही बन्द करलो रानी, लेकिन यह तथ्य तुम्हें सुनना और मानना पड़ेगा कि साम्राज्य का वैभव तप और

सत्या और उसके बेटों को ।

छाया

हा—हा—हा राजमाता कुन्ती ! अधीर मत हो । इन्हीं धर्म और पुण्य के खंभों पर सदेह स्वर्ग आने का सेतु बनेगा ! बुलाओ अपने धर्ममूर्ति धर्मराज को वह भी तुम्हारे साथ साथ अपने कीर्तिकलापों की असलियत का प्रत्यवलोकन कर ले ।

कुन्ती

धर्मराज धर्मराज बेटा दौड़ो । अपनी माता के विश्वास की नींव को ढहने से पहले बचाओ ।

छाया

(अपने बेटों से) सत्यासुतो अपना अभियोग पत्र उपस्थित करो । प्रपञ्च के आधार पर रखी हुई विश्वास की नींव ढगमगाने लगी है ।

सत्यासुत

(हाथ ऊंचे करके चिल्लाते हैं) पाण्डवों ने जिस राज्य को धर्मराज कहा जाता है उस पर ब्रह्महत्या जैसे सैकड़ों कलंक लगे हुए हैं ।

कुन्ती

यदि यह सत्य है और यह प्रमाण है तो स्वर्गलोक के बजाय नर्क-द्वार वरण करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं । अरे,

कितना मिथ्या समझा था मैंने !

छाया

मिथ्या एकान्त मिथ्या । एक गरीब ब्राह्मणी और पांच ब्राह्मणकुमारों की हत्या करके तुमने अपने प्राण बचाये !

कुन्ती

मुझे दुख है सत्य मुझे दुख है ।

छाया

दुख, हा-हा । उन बड़े भाग्यमियों को नहीं होता जिनका इतिहास इसी तरह के पापाचारों से निर्मित होता है ।

कुन्ती

तो क्या हमारे जीवन में गर्व करने लायक कुछ भी नहीं है ?

छाया

कुछ भी नहीं एक मात्र भी नहीं ।

कुन्ती

तो इस अपारव जीवन को जीकर मैं क्या करूं ?

छाया

तुम्हारा और तुम्हारे यशस्वी बेटों का जीवन पाप की एक लम्बी कहानी है । दुनिया में कितना ही दर्प और कितना

मं रा ६

ही वैभव प्रदर्शित करो, आखिर इस प्रवंचना को नग्न होना है—। इतनी जल्दी तुम अपने पापों से मुक्त नहीं सकती

[तत्पा अपने पांचों बेटों सहित अदृश्य हो जाती है ।]

कुन्ती

(आकाश को कम्पित करनेवाली चीख से रात्रि की सब कल... को स्तब्ध पुलक कर देती है ।) बचाओ, बचाओ । पार्थ इस सर्व कर आग से जो चारों ओर लग रही है अपनी माता की रक्षा करो ।

इधर उधर भागती है । पर्दे के पीछे कोलाहल होता है । अर्जुन, पांचाली भीम युधिष्ठिर सभी दौड़ते भागते मंच पर आ जाते हैं ।

अर्जुन

माता, कहां हो ?

पांचाली

माता, कहां हो ?

भीम

माता, कहां हो ?

युधिष्ठिर

मातेश्वरी हम आ गये ।

कुन्ती

रक्षा……करो ।

संज्ञाशून्य होकर धरती पर गिरती है । सब दौड़ कर हाथों हाथ उसे उठाते हैं ।

पर्दा

रचनाकाल
मई १९४१

हठ

समझाती और उन्हें एक एक कर भेजती है । उर्मिला का प्रवेश ।

उर्मिला

जीजी तो यहाँ भी नहीं । मैं कब की ढूँढ रही हूँ पर आज ... का पता ही नहीं लगता ।

दासी

(हाथ जोड़कर) स्वामिनी, अभी अपने मन्दिर में पधारी हैं । आज रात भर एक पल को भी विश्राम नहीं किया ।

उर्मिला

विश्राम कैसे कर पातीं ? उन्हें विश्राम का समय कहाँ है ?

दासी

आप उनके पास जाएँगी ?

उर्मिला

नहीं । अब वे गई हैं तो उन्हें थोड़ा चैन ले लेने दें ।

दासी

स्वामिनी ने याचकों को मुँह-माँगा दान देने तथा देवी अरुन्धती के पास ही माता कौशल्या का आसन रखने का आदेश दिया है

उर्मिला

ऐसा ही किया गया है।

एक ओर से उर्मिला और दासी का आगे-पीछे प्रस्थान। दूसरी ओर से सीता का प्रवेश

सूर्य भगवान् अपने वंश का महात्सव देखने के लिए कैसे सुसज्जित होकर आ रहे हैं! आकाश की ऐसी शोभा तो मैं पहली बार आज देख रही हूँ। उदयाचल के शिखर पर आज किसी ने बंदनवारें बांध दी हैं।

[मांडवी का प्रवेश

मांडवी

जीजी, आज आपको कोई काम नहीं करना है।

सीता

(हंसकर) क्यों माता कौशल्या का आदेश है?

मांडवी

नहीं, देवी अरुन्धती ने कहलाया है कि आप बहुत व्यस्त हो रही हैं। थक जायेंगी।

सीता

और तुम मान लेती हो। तुम बड़ी भोली हो मांडवी!

मांडवी

(मुस्करा कर) देवी अरुन्धती स्वयं वृद्ध हैं। इसलिए ऐसा समझती हैं।— पर जब उन्होंने कहा तो मैं क्या करती?

सीता

(हंसती हुई) अच्छा उसको जाकर कह देना कि उसकी आज्ञा शिरोधार्य है।

माधवी

जीजी !

सीता

कहो।

माधवी

जीजी, आज – (रुक जाती है।)

सीता

कहो बहिन माधवी, कहो।

माधवी

आज का दिन कितना धन्य है। कितना सुहावना है जीजी !

सीता

हाँ बहिन। सब मुझसे कहते हैं आराम करो विश्राम करो। काम मत करो। परिश्रम न करो। थक जाओगी, पर मुझ में आज थकावट का नाम नहीं। शरीर में जीवन और आनन्द का सागर उमड़ पड़ा है। जी होता है सारे काम अपने हाथों से कर डालूं किसी को कुछ भी न करने दूं।

माधवी

हां जीजी, ऐसा ही है। धरती तथा आकाश आज दोनों

हर्ष और उत्साह से आ रहे हैं। तो भी मेरा मन न जाने क्यों शंकित हो हो उठता है। कभी तो ऐसा नहीं होता था।

सीता

कुछ नहीं बहिन! देवर ननसाल से नहीं आ पाये हैं। इसीसे तेरा जी उचाट हो रहा होगा।

मांडवी

सो बात नहीं, जीजी। मन यों ही कुछ भी व्याकुल सा है।

सीता

भगवान् सब मंगल करेंगे।

मांडवी

(चुप रहती है।)

सीता

मेरा भी हृदय कांप रहा है। ज्यों ज्यों अभिषेक का समय समीप आ रहा है। मुझे भय सा लग रहा है। अनेक कामों में उलझकर मैं उसे बहलाना चाहती हूं पर आंखों के सामने से वह दृश्य ओझल ही नहीं होता। यही लगता है कि आर्य पुत्र सिंहासन पर बैठे हैं। छत्र उनके मस्तक पर रखता है गुरु वशिष्ठ के किये हुए तिलक से उनका माथा शोभित है चन्दन से शरीर चर्चित है। मैं उनके बाईं ओर बैठी हूं। मैं

सीता

अपराध क्षमा हो। परन्तु कोई कारण रहा होगा ?

राम

ज़रूर। पिताजी ने मझली माँ को कभी दो वरदान देने का वचन दिया था। उन्होंने आज अपने वे वरदान माँग लिये।

सीता

तो मझली माँ ने कहा है कि अभिषेक न हो ?

राम

नहीं मझली माँ ने कहा कि अभिषेक भैया भरत का हो।

सीता

(स्तब्ध होकर) बस।

राम

बस क्यों उन्होंने यह भी कहा कि मैं चौदह वर्ष तक वनवास करूं

सीता

हैं ! (मूर्छित होना चाहती है)

राम

(हाथों से सीता को संभालते हैं) प्यारी, धीरज धरो। क्या यह समय दुखी होने का है ?

सीता

(अपने को संभाल कर) आर्यपुत्र ! हाय यह क्या का क्या हो गया ? मझली माँ ने इस हरी-हरी दूब में चरने की स्वतन्त्रता देकर हमारा घात क्यों किया ? पहले ही वरदान क्यों न माँग लिये ?

राम

प्यारी जानकी मैं यह नहीं जानता था कि तुम्हें राज इतना प्यारा है। यदि जानता तो हाथ जोड़कर उसे मझली माँ से तुम्हारे लिए माँग लाता — मुझे तो ख्याल भी न था कि मैं तुम्हें इतनी व्याकुल देखूँगा ।

सीता

आर्य पुत्र ! सीता को राज की कामना नहीं। वनवास का भय नहीं। परन्तु अभिषेक के अन्तिम क्षण में माँ को यह क्या सूझा ? इस तमाम आयोजन का क्या होगा ? प्रजा हम सब लोगों को क्या कहेगी ? लज्जा से मेरा सिर पृथ्वी में गड़ा जा रहा है।

राम

प्यारी ! इसमें किसी का दोष नहीं। भावी बलवान होती है। मझली माँ तो एक निमित्त मात्र हैं।

सीता

आर्य पुत्र ठीक कहते हो पर मन में तो विचार आये बिना नहीं रहते ।

राम

प्रिये सावधान हो और उन विचारों को छोड़ो ।— अब बताओ मेरे वनवास के समय तुम यहां किस प्रकार रहोगी ? मेरे जाने से पिताजी को दुःख होगा । माता कौशल्या व्याकुल होंगी । उस समय तुम्हीं उनका सहारा होगी ।

सीता

आर्य पुत्र के मुंह से मैं क्या सुन रही हूं ? दुनियां आपको धर्म-धुरीण कहती है । स्त्री का धर्म क्या है सो आप मुझसे अधिक जानते हैं ।

राम

सीता, प्रिये ! मैं अपने और तुम्हारे हित की बात कहता हूं ।

सीता

स्वामी, परन्तु पत्नी का हित क्या उसके पति के हित में नहीं है ? क्या पत्नी पति की अर्धांगिनी नहीं है ? क्या वह अपने भर्ता के भाग्य को नहीं भोगती है ?

राम

परन्तु प्रिये ! पत्नी का यह भी धर्म है कि वह अपने स्वामी का प्रिय साधन करे। अपने सास-ससुर के चरणों की सेवा करे। उनके आशीर्वाद प्राप्त करे। बड़ों के आशीर्वाद बड़ी से बड़ी विपत्तियों का निवारण कर देते हैं।

सीता

नाथ ! मैं ज्ञानी मानी आपसे क्या कहूं ? मैं तो इतना जानती हूं कि मैं आपके चरणों की दासी हूं। मेरा भाग्य उनसे बंधा है। वे राजमहलों में रहेंगे तो वहां रहकर मैं उनकी सेवा करूंगी। वे वन में जायेंगे तो वहां मैं उनके साथ जाऊंगी। मैं उनके आगे आगे वन के कुश और कांटे बुहारती चलूंगी।

राम

वैदेही, तुम नहीं जानती। वन का तुम्हें तनिक भी ध्यान नहीं है। तुम राजहंसिनी हो तो वन मानो समुद्र है प्रिये ! तुम वहां एक दिन भी नहीं रह सकती हो। चलने को वहां मार्ग नहीं। खाने को भोजन नहीं पीने को पानी दुर्लभ। नंगे पर चलना। भूमि पर सोना। रूखे सूखे फल फूल खाना। वल्कल पहनना। ओह ! कहां तक कहूं।

सीता

कह लीजिये, आर्यपुत्र।

राम

तुम चित्र देखकर डरनेवाली हो। बाघ और भेड़ियों के साथ कैसे रहोगी? पग पग पर विषधर मजगर वहाँ रेंगते हैं। सिंह और चीते घूमते हैं। कपटी कुटिल राक्षसों का भी डर है। वहाँ दोपहर को धरती तवे-सी जलने लगती है। वहाँ का शीत पत्थरों को भी कँपा देता है ऐसे वन में तुम्हारे रहने की बात भी मेरी कल्पना में नहीं आती।

सीता

यह सच है स्वामी कि मैं वन के योग्य नहीं हूं। मिथला और अयोध्या के राजमहलों से बाहर दुनिया में क्या है यह मैं नहीं जानती। परन्तु तब यह मैं कैसे मान लूं कि आप अकेले वन में रह सकेंगे।

राम

पिता की आज्ञा को अमान्य कैसे कर दूं?

सीता

मैं स्त्री के धर्म का त्याग कर दूं?

राम

सीते!

सीता

नाथ!

राम

नहीं जानता मैं तुम्हें क्यों कर समझाऊं। तुम्हारा [illegible] हठ

कैसे दूर करूं ?

सीता

समझाने को कोई बात ही नहीं है, स्वामी ! चौदह वर्ष तक अकेली छोड़ जाने से तो अच्छा है आप अपने हाथों से विष घोल कर मुझे देते जायें । मैं बड़ी शान्ति से उसे पीकर सो जाऊंगी ।

राम

मैथिली ! चौदह वर्ष सुनने में ही बहुत लगते हैं । लेकिन दिन बीतते देर नहीं लगती । तुम अपना जी न बिगाड़ो प्रिये ! मैं वनवास की अवधि समाप्त होते ही लौट आऊंगा ।

सीता

तो मेरी बात न सुनने का आपने प्रण कर लिया है ? वन में क्या आपको एक दासी की आवश्यकता न होगी ? जब चलते-चलते आप थक जायेंगे । पसीने की बूंदें आपके माथे पर झलक आयेंगी तब वृक्ष की छाया में बैठकर मैं ही आपके ऊपर हवा करूंगी । झरने का शीतल जल लाकर आपके हाथ-पैर धोऊंगी । सन्ध्या समय कंद-मूल परोस कर आपको खिलाऊंगी ! रात को जब पत्तों की शैया पर आप श्रान्त-क्लान्त पड़ रहेंगे तो मैं धीरे धीरे आपके पैर दाबूंगी ।

राम

तो तुमने यही निश्चय कर लिया है ?

सीता

तो इसके सिवा मैं और क्या कर सकती हूं। वन के जिन कष्टों का आपने वर्णन किया है आपके साथ रहने और आपके चरणों का दर्शन करने से वे मेरे लिए फूलों की तरह सुख दायक हो जायेंगे। वहां के पशु-पक्षियों से डरने की मुझे आवश्यकता नहीं है। वे सब मेरे सहायक होंगे। मैं उनके स्नेह की छाया में वहां जाऊंगी निश्चय जानिए तो!— इतने पर भी आप मुझे यहां रखना चाहें तो मेरा शरीर ही रहेगा, प्राण नहीं रहेंगे। इसे सच जानिये

राम

यह बात है तो तुम मेरे साथ हो चलो। उठो, देर न करो। माता कौशल्या से चल कर विदा लेनी है।

सीता

सासुजी तो इधर ही आ रही हैं।

कौशल्या का प्रवेश, सीता माथे का आंचल ठीक करके प्रणाम करती है

कौशल्या

सौभाग्यवती होओ (राम से) वत्स, रामचंद्र यह मैं क्या

सुन रही हूं ?

राम

मां यह सच है।

कौशल्या

तब महाराज की बुद्धि भ्रष्ट हो गई है।

राम

ऐसा न कहो माता।

कौशल्या

तो क्या कहूं ? क्या यह कहूं कि अभिषेक न हो ? क्या यह कहूं कि तुम अयोध्या छोड़ कर वनवासी हो जाओ ?

राम

यही कहो मां—यही कहो।

कौशल्या

नहीं यह अन्याय मैं न होने दूंगी। मैं राजमाता हूं, राम। तुम चलो, तुम्हारा मन न चला। वशिष्ठ और सुमन्त इन्कार करेंगे तो मैं अपने हाथ से तुम्हारा अभिषेक करूंगी।— क्या कैकेयी के कहने से अभिषेक रुक जायेगा ?

राम

मां शान्त होओ।

कौशल्या

नहीं, राम ! इस समय शान्ति की बात मत करो।

राम

माँ, क्या तुम यह कहती हो कि मैं पिता की आज्ञा को तोड़ जाऊँ ?

कौशल्या

राम, बेटा ! मैं तुम्हारी माँ हूँ। पिता से भी बड़ी। मेरी आज्ञा है कि तुम अभिषेक से विमुख न हो। अभिषेक से विमुख होना कायरता है।

राम

कभी नहीं माँ कभी नहीं ! माता पिता की आज्ञा पालन करना कायरता नहीं हो सकती। फिर तुम्हारे लिए तो मेरा और भैया भरत का अभिषेक समान है। कहो क्या भरत तुम्हें मेरी ही तरह प्रिय नहीं हैं ?

कौशल्या

बेटा राम ! धर्म की वेश-भूषा पहन कर आये हुए अधर्म से इतना क्यों डरते हो ?

राम

माँ, यह तो प्रसन्न होने की बात है कि तुम्हारा राम इतना धर्मभीरु है !

कौशल्या

वत्स यदि यही बात है तो मैं भी तुम्हारे साथ वन को चलूँगी। हिम वर्षा और घाम में मैं अपने बच्चों की छाया बन

कर रहूँगी। — इस अयोध्या में, स्वार्थ की इस नगरी में, एक बार भी सांस लेना सह्य नहीं।

राम

मां मोह मत करो। पिताजी की दशा को देखो। मैं अभी देखकर आया हूँ। आह! कैसी दीन दशा हो रही है। मेरी अनुपस्थिति में तुम्हारे सिवा और कौन उनके शरीर को रख सकेगा?

कौशल्या

राम वत्स! तुम सबको देखते हो पर अपनी मां को नहीं देखते! हाय! मैं तुम्हारे बिना क्या करूंगी? कैसे जीऊंगी? तुम अकेले वन में घूमोगे और मैं राजमहलों में सुख भोगूंगी! आह! (आंसू पोंछती है)

राम

अकेला क्यों रहूँगा मां? यह मैथिली भी तो मेरे साथ है।

कौशल्या

(चौंककर) क्या कहा बेटा सुकुमारी सीता भी तुम्हारे साथ वन जायेगी? राजा जनक की बालिका भी वनवासिनी होगी? बेटा मेरा हृदय वज्र नहीं है जो ऐसी बातें सुन सके। जो सिरीस के फूल की तरह कोमल है। भूल कर भी जिसने कभी धरती पर पांव नहीं दिया है। जो सदा गोद और पालनों में पली है। जिसे मैंने आंखों की पुतली बना कर रखा है।

जिसे कभी दीपक की बत्ती हटाने को भी नहीं कहा है। वह यह मेरी भाग्यहीन जंगलों में मारी मारी फिरेगी! मैं नहीं सुन सकती राम मैं नहीं सुन सकती!

मूर्छित होती है। राम हाथ का सहारा देते हैं। सीता प्रयत्न से खड़ा करती है।

पर्दा

रचनाकाल
सितम्बर १९१९

पञ्चवटी

नट

राम — अयोध्या के महाराज

वासन्ती — एक वनवासिनी, सीता की सखी

गोप्रतारी घाट पर अवस्थान

दिन का पहला पहर

आकाश से विमान उतरता है। विमान पर महाराज रामचन्द्र बैठे दिखाई देते हैं। धीरे धीरे विमान पृथ्वी पर आ जाता है। राम विमान से उतरते और इधर उधर देखते हैं।

राम

यह तो वही स्थान है। मेरे जीवन का सबसे बड़ा पुण्य तीर्थ। यज्ञ की दीक्षा लेने से पूर्व तीर्थ-स्नान का गुरु वशिष्ठ का आदेश है। मैं समस्त तीर्थों का स्नान कर आया तो भी अन्तर की ज्वाला तो वैसी ही जग रही है। रोम रोम फुंका जा रहा है। अपने इस पावन तीर्थ में स्नान किये बिना उससे क्या कभी निस्तार हो सकता है? (इधर उधर टहलते हैं) आह, यहां का वातावरण कैसा शीतल है! लगता है जैसे कोई कपूर और चन्दन छिड़क रहा हो।

(पार्वती का प्रवेश)

वासन्ती

महानुभाव, आप कौन हैं ?

राम

(सुन नहीं सके हैं) यहाँ क्षण भर में ही प्राप्त शान्ति सुख का अनुभव करने लगे हैं।

वासन्ती

(और पास आकर) महानुभाव, आप कौन हैं ?

राम

(देखकर) वासंती !

वासन्ती

(चकित होकर) आप तो मुझे जानते हैं !

राम

वासंती !

वासन्ती

आपकी आवाज तो पहचानी हुई-सी है। आप कौन हैं, देव ?

राम

तुम्हीं बताओ मैं कौन हूँ, वासंती !

वासन्ती

(सोचती है।) महानुभाव याद नहीं पड़ता। क्

आपको देखा अवश्य है ।

राम

हाय वासंती ! आज तुम मुझे पहचान भी नहीं पा रही हो । मैं इतना बदल गया हूँ !

वासन्ती

मैं सोच रही हूँ । मुझे क्षमा करो महानुभाव !

राम

नहीं वासंती, तुम मुझे क्षमा करो । मैंने तुम्हारा अपराध किया है । मैंने तुम्हारी साध्वी सखी को त्याग दिया है । संसार जिसका नाम लेकर पवित्र होता है मैंने उस देवी को कलंक लगाया है । वासन्ती तुम मुझे नहीं पहचान रही हो सो ठीक कर रहा हो । मैं पापी राम इसी योग्य हूँ ।

वासन्ती

(केवल अन्तिम वाक्य पर ध्यान दे पाती है और आश्चर्य चकित होती है ।) रामचन्द्र— आप रामचन्द्र हैं ! मेरी प्यारी सखी सीता के स्वामी रामचन्द्र !

राम

वासन्ती, मुझ पापी को उस देवी के साथ याद मत करो ।

वासन्ती

(सुनती नहीं) अरे, कहाँ गया आपका वह दिव्य रूप

आप तो बिल्कुल पहचाने नहीं जाते। न वह कांति न वह शोभा, न वह बल— आह! आपका शरीर तो एक दम काँटा हो गया है।

राम

यह कुछ नहीं है वासंती! यह मेरे पाप का एकांश भी प्रायश्चित नहीं है।

वासन्ती

कैसा पाप? आपने कौनसा पाप किया?

राम

तुमने ध्यान नहीं दिया। तुमने सुना नहीं वासंती मैंने तुम्हारी सीता को त्याग दिया है।

वासन्ती

(स्तब्ध होकर) आप क्या कह रहे हैं? सीता को त्याग दिया है? श्री और शोभा की उस मूर्ति को त्याग दिया है?

राम

हाँ।

वासन्ती

(स्तब्ध हो जाती है। उसकी आवाज नहीं निकलती है)

राम

चुप क्यों हो गई, वासंती? मुझे धिक्कारो न।

वासन्ती

आप कहते हैं, आपने सीता का त्याग कर दिया है ?

राम

हाँ यही कहता हूँ ।

वासन्ती

किस अपराध पर ?

राम

अयोध्या के महाराज राम एक असती को घर कैसे रख सकते थे ?— बोलो।

वासन्ती

क्या कहा ? सीता असती ! संसार में पवित्रता का आदर्श स्थापित करने वाली सीता असती !— नहीं कभी नहीं आपको भ्रम हुआ होगा ।

राम

देवि, तुम ठीक कहती हो ।

वासन्ती

क्या ठीक कहती हूँ ?

राम

सीता कभी असती नहीं हो सकती । वह यम-धूम की तरह

पवित्र है।

वासन्ती

परन्तु आप तो अभी कुछ और कह रहे थे।

राम

वासन्ती देवी! तुम नहीं जानती। तुम वनवासिनी हो। तुम भोली हो।— अगर तुम जान पातीं कि राम के दो रूप हैं।

वासन्ती

क्या कह रहे हैं महाराज!

राम

देवी मैं कह रहा हूँ मेरे दो रूप हैं। एक रूप में मैं महाराज हूँ। दूसरे रूप में मैं रामचन्द्र हूँ। पहले रूप में मैंने सीता को अपराधी माना है। कलंकित माना है। उसे त्याग दिया है। घनघोर वन में हिंस्र पशुओं का भोजन बनने को उसे छोड़ दिया है। दूसरे रूप में मैं उसकी आराधना करता हूँ। मैं उसे निरपराधिनी मानता हूँ। उसके लिए रात-दिन रोता हूँ। स्वप्न में उससे मिलने के लिए छटपटाता हूँ। उसकी एक झलक पाने के लिए अपना सर्वस्व छोड़ सकता हूँ। उसकी याद में शरीर का खून सुखा दिया है।

वासन्ती

मैं कुछ नहीं समझती महाराज।

राम

राजा के पास हृदय नहीं होता, न्यायदण्ड होता है। उसके आँखें नहीं होतीं, कान होते हैं।

वासन्ती

मैं नहीं समझती महाराज।

राम

महाराज के कर्तव्य का मैंने पालन किया है। प्रजा में अपवाद फैल रहा था कि सीता पर-पुरुष के यहाँ रहकर आई है! सूर्यवंशी महाराज राम ने उसे ग्रहण कर लिया है!— कितना बड़ा अपवाद था! कैसा भयानक कलंक था? कोई राजवंश सह सकता था?

वासन्ती

और आपने उस पर विश्वास कर लिया?

राम

मैंने नहीं देवि महाराज राम ने विश्वास कर लिया महाराज प्रजा की बात पर अविश्वास कैसे कर सकते थे?

वासन्ती

महाराज कोई दूसरे हैं क्या? क्या आप अयोध्या के महा-

राज नहीं है ?

राम

मैंने अभी कहा था न वासन्ती कि जब से मैं महाराज बन गया हूँ तब से मेरे दो रूप हो गये हैं। हर एक बात का निर्णय मुझे महाराज की पद-मर्यादा के ध्यान से करना पड़ता है। राम की राय एक व्यक्ति की राय है। उसे यहाँ कोई नहीं पूछता देवि

वासन्ती

तो आप कैसे महाराज हैं ? आप जानते हुए भी सचाई का समर्थन नहीं कर सकते ?

राम

हाय, मैं तुम्हें कैसे समझाऊं देवि कि लोकेच्छा के बिना राजा की अपनी कोई सम्मति नहीं होती।

वासन्ती

तब तो आपकी स्थिति बड़ी दयनीय है।

राम

वासन्ती तुम मुझ पर क्रोध नहीं करती। मैंने तुम्हारी निरपराधिनी सखी को त्याग दिया यह जानकर भी तुम क्रोध नहीं करती ?

वासन्ती

पहले क्षोभ का भाव उठा अवश्य था परन्तु वह अब बिल कुल नहीं रहा।

राम

तुम्हें मेरे ऊपर जरा भी क्रोध नहीं ? तुमने मेरे अपराध को क्षमा कर दिया ?— बोलो बोलो।

वासन्ती

मेरे मन में महाराज की निरीहता पर दया उमड़ती है। आपके चेहरे से व्यक्त होता है कि आप कितनी भीषण मनोवेदना लिए घूमते हैं ?

राम

वासंती, देवि !

वासन्ती

महाराज, प्रायश्चित्त की मनस्तापिता ने तिल-तिल करके आपको सुखा दिया है।

राम

उस पाप की गुरुता के सामने यह कुछ भी नहीं है, वासन्ती।

वासन्ती

महाराज, यह पाप नहीं है।

राम

क्या कहा वासन्ती यह पाप नहीं है ? सीता को कलंकिनी बताना पाप नहीं है ?

वासन्ती

जब आप जानते हैं सीता पवित्र है। जब आप अपवाद पर विश्वास नहीं करते। जब आप अपनी भूल के लिए दुखी हैं। जब आपने केवल राजकीय कर्त्तव्यों का पालन किया है। जब आप लाचार थे। जब आपने सीता के साथ साथ अपने हृदय की शांति को भी त्याग दिया है। जब आपने सीता को त्याग कर न्याय-दण्ड का अपने ऊपर ही प्रहार किया है तब उसे पाप कहना कठिन है।

राम

तो इसे क्या कहोगी वासंती ? इसे राम का पुण्य कहोगी ? इसे राजधर्म कहोगी ?— कहो, जो चाहो कहो। आज राम अयोध्या के महाराज हैं उनके मुंह पर उनके कृत्यों को पाप कहने का साहस कौन करेगा। राजकोप को भला कौन निमन्त्रण देगा ? एक अबला के लिए जिसका अस्तित्व कौन जाने दुनिया में शेष है भी या नहीं, राजा की निंदा करना कोई न चाहेगा।

वासन्ती

यह मत समझो महाराज! वनवासिनी वासन्ती का हृदय बाहर से पत्थर हो गया दिखाई नहीं देता इससे यह न समझो कि वह अपनी सखी के लिए दुखी नहीं है। मैथिली के दुर्भाग्य के लिए मेरा रोम रोम रो रहा है। उस देवी को घोर विपत्ति में डालनेवाले के लिए मेरे अन्तर का ज्वालामुखी अभिशापों की वर्षा कर उसे जला डालना चाहता है—

राम

वह नारकी इसी योग्य है, वासन्ती!

वासन्ती

परन्तु—

राम

परंतु-परन्तु नहीं वासंती! अभिशाप दो, कोसो। परमात्मा से मनाओ कि उसके जन्म जन्मान्तर की शांति उससे छीन ले।

वासन्ती

क्यों नहीं महाराज?— मैं जानती हूँ सती जानकी के साथ कितना अन्याय हुआ है।, उन्हें अकल्पनीय दुखों में पड़ना पड़ा, परन्तु जब देखती हूँ कि महाराज ने उन्हें दण्ड देकर अपने को ही सबसे अधिक दण्ड दिया है तब जी में आपके प्रति सहानुभूति होती है। क्रोध गल जाता है, करुणा उमड़ती है

मुझे विश्वास है, मेरी सखी भी यदि आपको इस दशा में देख पाये तो उसे रुलाई ही आयेगी।

राम

क्या कहा ! सीता सीता मुझे क्षमा कर देगी ?— सचमुच वासन्ती वह देवी मुझे अवश्य क्षमा कर देगी। उसके प्रति मैं इससे भी बड़ा अधिक अन्याय करूं तो भी वह क्रोध न करेगी।

वासन्ती

महाराज मेरी सखी के शील-स्वभाव से परिचित हैं।

राम

ऐसा मत कहो वासन्ती ! यदि स्वार्थी राम शील-स्वभाव की कद्र जानता यदि प्रेम का उसके निकट कुछ भी मूल्य होता, तो वह सिंहासन त्याग देता परन्तु सीता को कलंकिनी कहकर निर्वासित न करता। राम को यश जितना प्यारा है प्रेम उतना नहीं ! उसकी दृष्टि में मर्यादा सीता से अधिक सुन्दरी है।

वासन्ती

तभी तो सुनती हूँ कि अश्वमेध यज्ञ में सहधर्मिणी के स्थान पर आपने मेरी सखी की स्वर्ण प्रतिमा रक्खी है।

राम

(निरुत्तर रहते हैं)

वासन्ती

चुप कैसे हो रहे हो महाराज !— क्या यह आपके संताप का पर्याप्त प्रमाण नहीं है ? और प्रमाण की जरूरत भी क्या ? आपका देह ! पुकार पुकार कर कह रहा है कि अपने ऊपर कितना अत्याचार करके आपने अपनी प्रिया को अपने से दूर किया है।

राम

बस करो वासन्ती ! बस करो। ओफ, अब उस बात की याद मत दिलाओ।

वासन्ती

(प्रसंग बदलने की इच्छा से) सुनती थी आप यज्ञ की दीक्षा ले रहे हैं, फिर आप यहाँ जनस्थान में कैसे आ गये ?

राम

जनस्थान में आये बिना राम का कोई यज्ञ क्या कभी पूरा हो सकता है ?

वासन्ती

आप अकेले ही आये हैं ? कुमार लक्ष्मण को साथ नहीं लाये ?

राम

अकेला ही आया हूँ, परंतु मेरी बात का उत्तर दो वासन्ती !

वासन्ती

किस बात का ?

राम

यही कि गोदावरी के तट पर जनस्थान और पञ्चवटी के दर्शन किये बिना क्या राम का कोई यज्ञ पूर्ण हो सकता है ? यह राम के जीवन का सबसे बड़ा पुण्य-तीर्थ है जहाँ मैंने प्रिया जानकी के साथ जीवन के सबसे सुन्दर वर्ष बिताये थे। तुम्हें याद है वासन्ती वे दिन जब यहीं कहीं अपने हाथों से मैथिली मृगछौनों को हरी-हरी दूब चराती थी, गोदावरी से जल ला ला कर अपने लगाये पौधों को सींचती थी वन-फूलों की माला गूँथ गूँथकर मुझे पहनाती थी,।— बोलो, याद है या भूल गई ?

वासन्ती

(रोती है)

राम

रोओ मत, वासन्ती। धीरज धरो और मेरी सहायता करो। यज्ञ की दीक्षा लेने का मुहूर्त निकट है। तुम्हारी सहायता से मैं जनस्थान और पञ्चवटी का दर्शन करना चाहता हूँ। मैं अशक्त हो रहा हूँ। मैं अशांत हो रहा हूँ। मुझे सहारा देकर ले चलो, देवि !

वासन्ती

(आंसू पोंछकर) आइये, महाराज ।

राम को हाथ का सहारा देती है और दोनों धीरे धीरे चलते हैं। दृश्य सरकता जा रहा है।

राम

वासंती कितने वर्ष बीत गये परन्तु लगता है जैसे सीता अभी अभी किसी लता-मण्डप से निकलकर आने वाली हो।

वासन्ती

सखी सीता के साथ आप जिस जगह रह चुके हैं वहां उनकी याद आना स्वाभाविक है।

राम

अब जब प्रिया का सिर्फ नाम शेष रह गया है, तब भी यहां उसके आसपास ही कहीं होने की प्रतीति होती है। सब जानते हुए भी जी यही कहता है कि मैं जाकर कुंजों की छाया में से उसे खोज लाऊं।

वासन्ती

(चलते चलते एक लतागृह दिखाकर) देखिये महाराज, यह वही लतागृह है जहां बहुत देर तक बैठकर आपने मेरी सखी की प्रतीक्षा की थी।

राम

और वह गोदावरी से जल भरने गई थी ।

वासन्ती

हाँ-हाँ ।

राम

परन्तु उड़ते हुए हंसों को देखने में ऐसी रम गई थी कि मैं बैठा राह देख रहा हूँ यह उसे एकदम बिसर गया था । जब लौटी तो अपराधिनी की भांति हाथ बाँध कर मेरे सामने खड़ी हो गई थी ।

वासन्ती

यह देखकर आप हँस दिये थे ।— महाराज तब आपका दण्डविधान और ही तरह का था ।

राम

उस प्रसंग को फिर न छेड़ो वासन्ती !

वासन्ती

(थोड़ा और आगे बढ़कर) लो महाराज, देखो सामने पंचवटी है ।

राम

वासंती देखो ! तुम्हें याद है प्रिया जानकी को यह स्थान [illegible] था ? वह दिन कितना भाग्यवान था जब प्यारी

वैदेही के साथ यहीं खड़े होकर पहले पहल मैंने भगवती गोदावरी के दर्शन किये थे। आज मैं अकेला हूँ!

(आँखों में आँसू भर आते हैं)

वासन्ती

एक दिन फिर आप मेरी सखी के साथ यहां आयेंगे, महाराज!

राम

वासंती क्या सचमुच वह दिन इसी जीवन में फिर आयेगा ?

वासन्ती

आना तो चाहिए महाराज।

राम

एक क्षण के लिए वह सुख लौट आये तो मुझे और कुछ नहीं चाहिए। (गहरी सांस लेते हैं)

वासन्ती

(पहाड़ी पर चढ़कर) महाराज भगवती गोदावरी की जलराशि देखिये।

राम

अभागा राम भगवती गोदावरी को प्रणाम करता है।

(हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं)

वासन्ती

चलिये महाराज, सीता तीर्थ के दर्शन करें।

पवित्र है।

वासन्ती

परन्तु आप तो अभी कुछ और कह रहे थे।

राम

वासन्ती देवी! तुम नहीं जानती। तुम वनवासिनी हो। तुम भोली हो।— अगर तुम जान पातीं कि राम के दो रूप हैं।

वासन्ती

क्या कह रहे हैं महाराज!

राम

देवी मैं कह रहा हूँ मेरे दो रूप हैं। एक रूप में मैं महाराज हूँ। दूसरे रूप में मैं रामचन्द्र हूँ। पहले रूप में मैंने सीता को असती माना है। कलंकिनी माना है। उसे त्याग दिया है। घनघोर वन में हिंस्र पशुओं का भोजन बनने को उसे छोड़ दिया है! दूसरे रूप में मैं उसकी आराधना करता हूँ। मैं उसे निरपराधिनी मानता हूँ। उसके लिए रात दिन रोता हूँ। स्वप्न में उससे मिलने के लिए छटपटाता हूँ। उसकी एक झलक पाने के लिए अपना सर्वस्व छोड़ सकता हूँ। उसकी याद में शरीर का खून सुखा दिया है।

वासन्ती

मैं कुछ नहीं समझती महाराज।

राम

राजा के पास हृदय नहीं होता, न्यायदण्ड होता है। उसके आँखें नहीं होतीं, कान होते हैं।

वासन्ती

मैं नहीं समझती महाराज।

राम

महाराज के कर्तव्य का मैंने पालन किया है। प्रजा में अपवाद फैल रहा था कि सीता पर-पुरुष के यहाँ रहकर आई है। सूर्यवंशी महाराज राम ने उसे ग्रहण कर लिया है।— कितना बड़ा अपवाद था! कैसा भयानक कलंक था? कोई राजवंश सह सकता था?

वासन्ती

और आपने उस पर विश्वास कर लिया?

राम

मैंने नहीं देवि महाराज राम ने विश्वास कर लिया महाराज प्रजा की बात पर अविश्वास कैसे कर सकते थे?

वासन्ती

महाराज कोई दूसरे हैं क्या? क्या आप अयो॰

राज नहीं है ?

राम

मैंने अभी कहा था न वासन्ती कि जब से मैं महाराज बन गया हूँ तब से मेरे दो रूप हो गये हैं। हर एक बात का निर्णय मुझे महाराज की पद-मर्यादा के ध्यान से करना पड़ता है। राम की राय एक व्यक्ति की राय है। उसे यहां कोई नहीं पूछता देवि

वासन्ती

तो आप कैसे महाराज हैं? आप जानते हुए भी सचाई का समर्थन नहीं कर सकते ?

राम

हाय, मैं तुम्हें कैसे समझाऊं देवि कि लोकेच्छा के बिना राजा की अपनी कोई सम्मति नहीं होती।

वासन्ती

तब तो आपकी स्थिति बड़ी दयनीय है।

राम

वासन्ती तुम मुझ पर क्रोध नहीं करती। मैंने तुम्हारी निरपराधिनी सखी को त्याग दिया यह जानकर भी तुम क्रोध नहीं करती ?

वासन्ती

पहले क्षोभ का भाव उगा अवश्य था परन्तु वह अब बिल-कुल नहीं रहा।

राम

तुम्हें मेरे ऊपर जरा सा क्रोध नहीं ? तुमने मेरे अपराध को क्षमा कर दिया ?— वासो बोला।

वासन्ती

मेरे मन में महाराज की निरीहता पर दया उमड़ती है। आपके चेहरे से व्यक्त होता है कि आप कितनी भीषण मनोवेदना लिए घूमते हैं ?

राम

वासंती सखि !

वासन्ती

महाराज, प्रायश्चित की प्रज्वाला ने तिल-तिल करके आपको सुखा दिया है।

राम

उस पाप की गुरुता के सामने यह कुछ भी नहीं है, वासन्ती।

वासन्ती

महाराज यह पाप नहीं है।

राम

क्या कहा वासन्ती यह पाप नहीं है? सीता को कलंकिनी बताना पाप नहीं है?

वासन्ती

जब आप जानते हैं सीता पवित्र है। जब आप अपवाद पर विश्वास नहीं करते। जब आप अपनी भूल के लिए दुखी हैं। जब आपने केवल राजकीय कर्तव्यों का पालन किया है। जब आप लाचार थे। जब आपने सीता के साथ साथ अपने हृदय की शांति को भी त्याग दिया है। जब आपने सीता को त्याग कर न्याय-दण्ड का अपने ऊपर ही प्रहार किया है तब उसे पाप कहना कठिन है।

राम

तो इसे क्या कहोगी वासंती? इसे राम का पुण्य कहोगी? इसे राजधर्म कहोगी?— नहीं, जो चाहो कहो। आज राम अयोध्या के महाराज हैं उनके मुंह पर उनके कृत्यों को पाप कहने का साहस कौन करेगा। राजकोप को भला कौन निमन्त्रण देगा? एक अबला के लिए जिसका अस्तित्व तीन प्राणी दुनियां में शेष है भी या नहीं राजा की निंदा करना कोई न चाहेगा।

वासन्ती

यह मत समझो महाराज। वनवासिनी वासन्ती का हृदय बाहर से शान्त हो गया दिखाई नहीं देता इससे यह न समझो कि वह अपनी सखी के लिए दुखी नहीं है! मैथिली के दुर्भाग्य के लिए मेरा रोम रोम रो रहा है। उस देवी को घोर विपत्ति में डालनेवाले के लिए मेरे अन्तर का ज्वालामुखी अभिशापों की वर्षा कर उसे जला डालना चाहता है—

राम

वह नारकी इसी योग्य है, वासन्ती!

वासन्ती

परन्तु—

राम

परंतु-परन्तु नहीं वासंती! अभिशाप दो, कोसो! परमात्मा से मनाओ कि उसके जन्म जन्मान्तर की शांति उससे छीन ले।

वासन्ती

क्यों नहीं महाराज?— मैं जानती हूँ सखी जानकी के साथ कितना अनर्थ हुआ है। उन्हें अकल्पनीय दुखों में पड़ना पड़ा, परन्तु जब देखती हूँ कि महाराज ने उन्हें दण्ड देकर अपने को ही सबसे अधिक दण्ड दिया है तब जी में आपके प्रति सहानुभूति होती है। क्रोध मन आता है, करुणा उमड़ती है।—

मुझे विश्वास है, मेरी सखी भी – यदि आपको इस दशा में देख पाये तो उसे रुलाई ही आयगी ।

राम

क्या कहा ! सीता सीता मुझे क्षमा कर देगी ?—– सचमु वासन्ती वह देवी मुझे अवश्य क्षमा कर देगी । उसके प्रति इससे भी बड़ा अधिक अन्याय करू तो भी वह कोप न करे

वासन्ती

महाराज, मेरी सखी के शील-स्वभाव से परिचित है ।

राम

ऐसा मत कहो वासन्ती ! यदि स्वार्थी राम शील-स्वभाव की कद्र जानता यदि प्रेम का उसके निकट कुछ भी मूल्य होता तो वह सिंहासन त्याग देता परन्तु सीता को कलंकिनी कहकर निर्वासित न करता । राम को यश जितना प्यारा है प्रेम उतना नहीं । उसकी दृष्टि में मर्यादा सीता से अधिक सुन्दरी है ।

वासन्ती

तभी तो सुनती हूँ कि अश्वमेध यज्ञ में सहधर्मिणी के स्थान पर आपने मेरी सखी की स्वर्ण प्रतिमा रक्खी है ।

राम

(निरुत्तर रहते हैं)

वासन्ती

चुप कैसे हो रहे हो महाराज !— क्या यह आपके सताप का पर्याप्त प्रमाण नहीं है ? और प्रमाण की जरूरत भी क्या ? आपका चेहरा पुकार पुकार कर कह रहा है कि अपने ऊपर कितना अत्याचार करके आपने अपनी प्रिया को अपने से दूर किया है ।

राम

बस करो वासंती ! बस करो । आफ, अब उस बात की याद मत दिलाओ ।

वासन्ती

(प्रसग बदलने की इच्छा से) सुनती थी आप यज्ञ की दीक्षा ले रहे हैं, फिर आप यहाँ जनस्थान म कैसे आ गये ?

राम

जनस्थान में आये बिना राम का कोई यज्ञ क्या कभी पूरा हो सकता है ?

वासन्ती

आप अकेले ही आये हैं ? कुमार लक्ष्मण को साथ नहीं लाये ?

राम

अकेला ही आया हूँ परंतु मेरी बात का उत्तर दो

वासन्ती

किस बात का ?

राम

यही कि गोदावरी के तट पर जनस्थान और पञ्चवटी के दर्शन किये बिना क्या राम का कोई यज्ञ पूर्ण हो सकता है ? यह राम के जीवन का सबसे बड़ा पुण्य-तीर्थ है जहाँ मैंने प्रिया जानकी के साथ जीवन के सबसे सुन्दर वर्ष बिताये थे । तुम्हें याद है वासन्ती वे दिन जब यहीं कहीं अपने हाथों से मैथिली मृगछौनों को हरी-हरी दूब चराती थी, गोदावरी से जल ला-लाकर अपने लगाये पौधों को सींचती थी, वन-फूलों की माला गूँथ गूँथकर मुझे पहनाती थी, ।— बोलो, याद है या भूल गईं ?

वासन्ती

(रोती है)

राम

रोओ मत, वासन्ती । धीरज धरो और मेरी सहायता करो । यज्ञ की दीक्षा लेने का मुहूर्त निकट है । तुम्हारी सहायता से मैं जनस्थान और पञ्चवटी का दर्शन करना चाहता हूँ । मैं अधीर हो रहा हूँ । मैं अशांत हो रहा हूँ । मुझे सहारा देकर ले चलो, देवि !

वासन्ती

(आंसू पोंछकर) आइये, महाराज ।

राम को हाथ का सहारा देती है और दोनों धीरे धीरे चलते हैं ।

दृश्य सरकता जा रहा है ।

राम

वासंती कितने वर्ष बीत गये परन्तु लगता है जैसे सीता अभी अभी किसी लता-मण्डप से निकलकर आने वाली हो ।

वासन्ती

सखी सीता के साथ आप जिस जगह रह चुके हैं वहां उनकी याद आना स्वाभाविक है ।

राम

अब जब प्रिया का सिर्फ नाम शेष रह गया है, तब भी यहां उसके आसपास ही कहीं होने की प्रतीति होती है । सब जानते हुए भी जी यही कहता है कि मैं जाकर कुञ्जों की छाया में से उसे खोज लाऊं ।

वासन्ती

(चलते चलते एक लतागृह दिखाकर) देखिये महाराज, यह वही लतागृह है जहां बहुत देर तक बैठकर आपने जो प्रतीक्षा की थी ।

राम

और वह गोदावरी से जल भरने गई थी ।

वासन्ती

हां–हां ।

राम

परन्तु उड़ते हुए हंसों को देखने में ऐसी रम गई थी कि मैं बैठा राह देख रहा हूं यह उसे एकदम बिसर गया था । जब लौटी तो अपराधिनी की भांति हाथ बांध कर मेरे सामने खड़ी हो गई थी ।

वासन्ती

यह देखकर आप हंस दिये थे ।— महाराज तब आपका हास्यविमान और ही तरह का था ।

राम

उस प्रसंग को फिर न छेड़ो वासन्ती ।

वासन्ती

(थोड़ा और आगे बढ़कर) लो महाराज, देखो सामने पंचवटी है ।

राम

वासंती देखो ! तुम्हें याद है प्रिया जानकी को यह स्थ कितना प्रिय था ? वह दिन कितना भाग्यवान था जब

वैदेही के साथ यहीं खड़े होकर पहले पहल मैंने भगवती गोदावरी के दर्शन किये थे। आज मैं अकेला हूँ।

(आँखों में आँसू भर लाते हैं)

वासन्ती

एक दिन फिर आप मेरी सखी के साथ यहाँ आयेंगे, महाराज।

राम

वासंती क्या सचमुच वह दिन इसी जीवन में फिर आयेगा ?

वासन्ती

आना तो चाहिए महाराज।

राम

एक क्षण के लिए वह सुख लौट आये तो मुझे और कुछ नहीं चाहिए। (गहरी सांस लेते हैं)

वासन्ती

(पहाड़ी पर चढ़कर) महाराज, भगवती गोदावरी की जलराशि देखिये।

राम

अभागा राम भगवती गोदावरी को प्रणाम करता है।

(हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं)

वासन्ती

चलिये महाराज, सीता तीर्थ के दर्शन करें।

राम

(चलते चलते) वासन्ती इधर देखो इन्हीं वृक्षों की छाया में कहीं अपनी पर्णकुटी थी !

वासन्ती

पर्णकुटी के द्वार के सामने वाला रसाल अब तक खड़ा है। इसी छाया में मेरी सखी बैठकर अपने मोरों का नाच देखती थी।

राम

इसी स्फटिक शिला पर प्रियाके साथ मैंने कितनी बार वन की शोभा देखी थी। आज अकेले ही थोड़ी देर बैठ लूं ?

(बैठते हैं)

वासंती

महाराज, मेरी सखी ने जिन मृग-छौनों को लाड़-प्यार से पाला था वे अब तक उसे भूले नहीं हैं। वे जब तब यहां आ-आकर शिला को सूंघते और कुंजों में उसे खोजते फिरते हैं।

राम

वासन्ती यह पशु-पक्षी धन्य हैं जो अपना प्रेम अब तक बनाये हैं। मुझसे तो यह भी नहीं हुआ। उसके विश्वास का मैंने कैसा सुन्दर बदला दिया ! (दुखी होते हैं)

वासंती

महाराज इस तरह दुखी होने से आप कैसे देख सकेंगे ? यहाँ तो क्षण क्षण में आपको सखी मैथिली की स्मृतियां मिल जायेंगी ।

राम

चलो आगे चलें । (उठकर चलते हैं)

वासंती

महाराज, आपको याद नहीं होगा एक बार आप इसी सघन कुंज में कहीं छुप गये थे । मेरी सखी आपको खोजते खोजते थक गई थी । कुमार लक्ष्मण पहले ही से कहीं गये हुए थे ।

राम

याद है याद है वासन्ती !— मुझे न पाकर प्रिया डर कर मूर्छित हो गई थी । होश में आने पर फिर मुझे देखकर कितना रोई थी !— मैं बड़ा निठुर हूं । मैंने सदा उसके आंसुओं के साथ खिलवाड़ किया है !

वासन्ती

इधर आइये महाराज आपको एक चीज दिखाऊं । यह आपने पहले कभी न देखी होगी परन्तु आप

होगी।

राम

यह क्या ?

वासन्ती

कि आप बिना आंसू बहाये उसे देखेंगे।

राम

वासंती तुम समझती हो क्या मैं यों ही आंसू ब आते सखी मैं अपने हृदय को भरसक रोकता हूं। जब विवश हो जाता हूं तभी—

वासन्ती

(केतक के वृक्ष के पास जाकर) देखिये महाराज !

राम

देख रहा हूं।

आगे बढ़कर देखते हैं। वृक्ष के तने पर यहां वहां सुन्दर अक्षरों में राम नाम अंकित है और ऊपर आने से खूब स्पष्ट हो गया है

राम

इन अक्षरों में प्रिया का प्रेम स्पष्ट हो रहा है। हाय! उसे मुझसे और मेरे नाम से कितना स्नेह था ?

वासन्ती

यह इधर चित्रकारी भी तो देखिये।

राम

फिर और क्या है ? (घूमकर देखते हैं) अरे यह तो धनुर्भंग का चित्र है। प्रिया दोनों हाथों से मेरे गले में जयमाला डाल रही है। वासन्ती सखी ! मुझे क्षमा करना। यह दृश्य तो मुझसे देखा नहीं जाता। (रोते हैं)

वासन्ती

(आँखों के आँसू पोंछकर) ये चित्र खींचकर मेरी सखी अधिक दिन यहाँ न रही थी। इस तरह तो ये बाद में उभरे होंगे।

राम

प्रिया जानकी के हाथ के ये चित्र प्रकृति ने कितनी रुचि और सावधानी से सुरक्षित रक्खे हैं ? मैंने उसी जानकी का अपने हाथों से दूर फेंक दिया।

वासन्ती

हाथों से दूर फेंकने से क्या होता है, हृदय से तो नहीं फेंक सके हैं ?

राम

यह मेरे वश की बात नहीं है, वासंती। (रोते हैं।)

होगी।

राम

वह क्या ?

वासन्ती

कि आप बिना आँसू बहाये उसे देखेंगे।

राम

वासन्ती तुम समझती हो क्या मैं यों ही आँसू बहाता हूँ। सच जानो सखी मैं अपने हृदय को बरबस रोकता हूँ। जब विवश हो जाता हूँ तभी—

वासन्ती

(सँहुड़ के वृक्ष के पास जाकर) देखिये महाराज !

राम

देख रहा हूँ।

आगे बढ़कर देखते हैं। वृक्ष के तने पर जहाँ तहाँ सुन्दर अक्षरों में राम नाम अंकित है जो ऊपर छाले के कुछ स्पष्ट हो गया है

राम

इन अक्षरों में प्रिया का प्रेम स्पष्ट हो रहा है। हाय! उसे मुझसे और मेरे नाम से कितना स्नेह था ?

वासन्ती

यह इधर चित्रकारी भी तो देखिये।

राम

फिर और क्या है ? (घूमकर देखते हैं) अरे यह तो धनुर्भंग का चित्र है। प्रिया दोनों हाथों से मेरे गले में जयमाला डाल रही है। वासती सखी! मुझे क्षमा करना। यह दृश्य तो मुझसे देखा नहीं जाता। (रोते हैं)

वासन्ती

(आंखों के आंसू पोंछकर) ये चित्र खींचकर मेरी सखी अधिक दिन यहां न रही थी। इस तरह तो वे बाद में रमरे होंगे।

राम

प्रिया जानकी के हाथ के ये चित्र प्रकृति ने कितनी रुचि और सावधानी से सुरक्षित रखे हैं ? मैंने उसी जानकी को अपने हाथों से दूर फेंक दिया।

वासन्ती

हाथों से दूर फेंकने से क्या होता है हृदय से तो नहीं फेंक सके हैं ?

राम

यह मेरे वश की बात नहीं है, वासंती। (रोते हैं।)

वासन्ती

मैंने यहां आकर स्वयं महाराज का जी दुखाया । चलिये, अब आप थक गये होंगे । थोड़ा विश्राम कर लीजिये ।

राम

वासंती, राम को इस जन्म में विश्राम कहां ? राम तो राजधर्म से बंधा है यहां घूमते हुए भी क्षण-क्षण पर उसे अश्वमेध यज्ञ का ध्यान आ रहा है । इस दुष्ट राजधर्म ने ही प्राण प्रिया को मुझसे विलग कराया है । वही अब उसकी स्मृति के साथ अकेले में दो घड़ी हंसने और रोने भी नहीं देता ।

(व्याकुल होते हैं ।)

वासन्ती

तो महाराज बिना विश्राम किये ही चले जायेंगे ?

राम

हां, मैं चला जाऊंगा । मैं अब अयोध्या का महाराज हूं न ? मेरा समय बड़ा कीमती है । मैं उसे रोने-धोने में कैसे लगा सकता हूं ?— परन्तु वासंती, जिस तरह तुम सीता को याद रखे हो, उसी तरह क्या इस अधम राम को भी याद रखोगी ?

वासन्ती

राम और सीता को मेरे जीवन से कोई अलग नहीं कर

सकता है ? मेरे निकट वे सदा साथ रहेंगे ।

राम

वासंती, तुम बड़ी पुण्यात्मा हो । तुम्हारा जीवन धन्य है । जब राम सीता के लिए तरसते हैं, जब उनमें न जाने कितने जन्मों का अन्तर पड़ गया है तब तुम्हारे समीप वे दोनों एक हैं — साथ हैं ।

वासन्ती

महाराज वे फिर एक होंगे !— मेरा मन कहता है वे फिर मिलेंगे ।

राम

यहाँ से जाने से पहले अपने इस दृढ़ विश्वास को मेरे मन में भी भर दो, वासन्ती ? यह पापी जीवन बहुत जल चुका है । अब इसे कुछ देर सुख से जीने लायक बना दो ?— बना दो देवि ! (व्याकुलता का अनुभव करते हैं ।)

वासन्ती

भगवान् चाहेंगे तो यही होगा ।— धीरज धरिये, महाराज ।

वासन्ती हाथ के सहारे से रामचन्द्र को विमान पर चढ़ा देती है ।

राम रोते हैं । विमान धीरे धीरे ऊपर उठता है ।

वासन्ती पृथ्वी पर पछाड़ खाकर गिरती है ।

पर्दा